चतुर्थ अध्याय

# ज्ञानरंजन की कहानियों में सामाजिक जीवन

# ''ज्ञानरंजन की कहानियों में सामाजिक जीवन''

## 4.1. प्रस्तावना -

साहित्य समाज का दर्पण माना जाता है। व्यक्ति और समाज का घनिष्ट संबंध होता है। व्यक्ति समाज से हटकर हो ही नहीं सकता। साहित्यकार जिस समाज में रहता है उस समाज का चित्रण अपने साहित्य में करता है। साहित्यकार अपने भोगे हुए जीवन का ही चित्रण अपने साहित्य में करता है तो कभी साहित्यकार कल्पना की उड़ान लगाकर साहित्य लिखता है। जो साहित्यकार समाज का यथार्थ चित्रण करता है उसे श्रेष्ठ माना जाता है। इसका मतलब यह नहीं की काल्पनिक और ऐतिहासिक साहित्य लिखनेवाले गौण हैं बल्कि समाज का चित्रण पाठक ने भोगा हुआ जीवन होता है इस कारण प्रिय होता है। कहानीकार ज्ञानरंजन को शहर प्रिय रहा है। इस कारण अधिकतर कहानियों में शहरी मध्यवर्गीय जीवन का यथार्थ चित्रण दिखाई देता है।

## 4.2. समाज स्वरूप, महत्त्व, परिभाषा -

प्राचीन काल में समाज के जो मूल्य थे वे आज नहीं हैं और आज के समाज मूल्य पहले नहीं थे। त्याग, परोपकार, सत्य, नैतिकता आदि हमारे समाज के तत्त्व हैं। इस तत्त्वों के आधार पर ही हमारे समाज का विकास होता रहा है। समाज से यह तत्त्व गायब हुए तो उस समाज के विकास होने में देर लगती है। सीताराम झा 'श्याम' कहते हैं - ''भारतीय समाज न केवल अपनी प्रगति के लिए अपितु संपूर्ण संसार के सर्वतोमुखी विकास के हेतु सतत प्रयत्नशील रहा है। यही कारण है कि त्याग, परोपकार, सत्य, नैतिकता आदि सामाजिक आदर्श के निर्धारक तत्त्वों के ग्रहण पर जितना बल भारत में किया गया है उतना और किसी भी देश में नहीं।''[1] इन तत्त्वों के आधार पर ही समाज की उन्नति होती है। किंतु समाज परिवर्तनशील होने के कारण उसके साथ-साथ वे तत्त्व भी बदल गए हैं। भले ही उन तत्त्वों को बदलनेवाले कारण अलग-अलग हों। हमारे देश में किसी न किसी रूप में आज भी इन तत्त्वों के दर्शन होते ही हैं। सीताराम झा 'श्याम' कहते हैं - ''समाज के स्वरूप में परिवर्तन का होना सहज स्वाभाविक है। प्रत्येक राष्ट्र में आंतरिक और बाह्य कारणों से सामाजिक परिवर्तन होते ही रहते हैं। पर हर्षोत्तर, काल से भारत में रीति-रिवाज, आहार-व्यवहार, परिधान-प्रसाधन,

राजनीति, अर्थनीति, शिक्षा-भाषा, संस्कृति-गल्प आदि विभिन्न विषयों के स्वरूप में द्रुत गति से परिवर्तन हुए। फिर भी इतना ध्यातव्य है कि इसके आंतरिक रूप अध्यावधिक अपरिवर्तित ही रहे। इसकी विशिष्टताएँ आज भी सुरक्षित हैं।''[2]

भारतीय समाज में विविधता है। अनेक जाति-पाति हैं। अनेक भाषाएँ हैं। इस अनेकता में एकता है यह हमारे भारतीय समाज का वैशिष्ट्य है। हर समाज के अपने-अपने, अलग-अलग तत्त्व हैं, उनकी रूढ़ि परंपरा में अनेकता है। डॉ. आर. जी. सिंह कहते हैं - ''कहीं एक विवाह तो कहीं बहु पति अथवा बहु पत्नी विवाह, कहीं पितृवंश तो कहीं मातृवंश, कहीं संयुक्त तो कहीं मूल परिवार, कहीं दाय भाग तो कहीं मिताक्षरा उत्तराधिकार, कहीं यौन संबंध पर कठोर प्रतिबंध तो कहीं अत्याधिक शिथिलता, कहीं तलाक और पुनर्विवाह पर रोक तो कहीं चूड़ी प्रथा ये सब तत्त्व भारतीय सामाजिक जीवन में भिन्नताओं के ही तो द्योतक हैं।''[3] यहाँ स्पष्ट है कि भारतीय समाज जीवन में अनेकता है।

वर्तमान युग में उपर्युक्त मूल्यों में परिवर्तन आ रहा है। त्याग, परोपकार, सत्य, नैतिकता यह मूल्य भले ही समाज में हो लेकिन उनका मूल्य कम हो रहे दिखाई देते हैं। हमारे रीति-रिवाज, आहार-व्यवहार, परिधान-प्रसाधन, राजनीति, अर्थनीति, शिक्षा-भाषा, संस्कृति आदि में भी अमुलाग्र बदल हो गया है। इनका स्थान अलग तत्त्वों ने किया है। औद्योगिकरण, शहरीकरण, पाश्चात्य प्रभाव, व्यक्तिवादिता आदि के कारण भारतीय आदर्श मूल्यों का रूप बदल गया है। आज की परिस्थितियों के कारण इस मूल्यों में बदलाव आ गया है। आज परिवार का स्वरूप भी बदल रहा है। परिवार में अजनबीपन, अकेलापन बढ़ रहा है। आज व्यक्ति-व्यक्ति से दूर जा रहा है। अपने परिवार में रह कर व्यक्ति अकेला होता जा रहा है। शहरी भीड़-भाड़ में रहने के कारण उसके अंदर घुटन-ही-घुटन है। रिश्तों में अंतर आ गया है लेकिन आज भी इन आदर्शों का रूप हमार समाज में है। रामदरश मिश्र लिखते हैं - ''यह युग शहर से लेकर गाँव तक फैला हुआ है। स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात अपने-अपने परिवेश में शहर और गाँव दोनों के संबंध बदले हैं, मूल्य टूटे हैं, संक्रांतियाँ आई हैं, दृष्टियाँ बदली हैं, बौद्धिकता ने अनेक विश्वास तोड़े हैं और परिस्थितियों तथा जीवन-पद्धितियों में काफी अंतर आया है। किंतु कुल मिलाकर अभी गाँव-गाँव है, कस्बे-कस्बे हैं, नगर-नगर हैं और महानगर-महानगर।''[4] यहाँ स्पष्ट है कि भले ही समाज के आदर्श बदले लेकिन कई रूपों में आज भी उनका रूप दिखाई देता है।

आज के वैज्ञानिक युग में समय और स्थान की दूरी कम से कम हुई है, वही मन से मन, आदमी से आदमी बहुत दूर होते जा रहे हैं। आज मानव अधिकाधिक आत्मकेंद्रित हो रहा है या सही अर्थों में जड़ व्यवस्था ने उसे मजबूर कर दिया है। सारी दुनिया से कटकर वह अपनी एक अलग दुनिया बना देना चाहता है, जो कि व्यावहारिक रूप से कतई संभव नहीं है। समूचे संसार को एक कोने में समेट लेने की लोलुपता या मजबूरी ही विभिन्न आयामों में फैल कर अपनी संपूर्ण अर्थवत्ता में आज की कहानी में अभिव्यक्त हुई है। प्रल्हाद अग्रवाल इन जटिल परिस्थितियों के कारण मनुष्य की दारूण अवस्था के विषय में लिखते हैं - ''जीना-मरना, मानापमान, प्रतिष्ठा आदि बाते बहुत गौण हो गई हैं। आत्मसम्मान से मुक्त जीवनयापन एक चैलेंज है क्योंकि हमे खुद कहीं-न- कहीं व्यवस्था के कुचक्र में शरीक होना पड़ता है। ईमानदारी से पेट भरने के लिए बेईमानी को 'जयराम जी' करनी पड़ती है। इसलिए मनुष्य के सामने आज सबसे बड़ा संकट उसके अस्तित्त्व का है, वह अस्तित्त्व जो असल्यित में धीरे-धीरे चुकता जा रहा है।''[5] यहाँ स्पष्ट है कि सन् 60 के बाद की तत्कालीन परिस्थितियों के कारण सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन आ गया था। विवेच्य कहानीकार ज्ञानरंजन ने अपनी कहानियों में तत्कालीन समाज का यथार्थ चित्रण किया है। भीष्म साहनी कहते हैं - ''ज्ञानरंजन की कहानियाँ न केवल हमारे समाज की सही तस्वीर पेश करती है, बल्कि अपने काल के यथार्थ को गहरे में महसूस करवाती है। उनकी कहानियाँ सपाट कहानियाँ नहीं हैं। एक-एक कहानी में से कई-कई रंग उभरते हैं। एक-एक वाक्य तरह-तरह के संबंध-सूत्र लिए रहता है।''[6]

ज्ञानरंजन की यह एक विशेषता है कि उन्होंने व्यक्ति के अंदर की विद्रुपता और विकृतियों को पकड़कर बाहर निकालने का प्रयास किया है। उनके समकालीन ढ़ेर सारे कहानीकारों ने समाज का चित्रण किया है लेकिन ज्ञान की अपनी अलग पहचान बन गई है। यहाँ विश्वम्भरनाथ उपाध्याय का मतंव्य दृष्टव्य है - ''ज्ञानरंजन संबंधों और संघर्षों दोनों प्रकार की कहानियों में अनूठे हैं और उनके मानसिक वैभव एवं भाषा और वाक्य संरचना के वैलक्षण्य के कारण उनकी कहानियों को बार-बार पढ़ा जा सकता है। क्योंकि उनकी मानस्तात्विक प्रणाली और कथ्य को छुपाने की कला कहानियों को पारदर्शी नहीं पहेली बनाती है।''[7] उन्होंने अपनी कहानी में कथानायक को कभी महत्त्व नहीं दिया है। कथानक की जगह चरित्र ही उसका काम करते हैं। जीवन की विषमता, कटुता इसका ही चित्रण करना उनका उद्देश्य रहा है। यहाँ स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन ने कहीं कोई झूठ या

पलायनवादी भावना लेकर यथार्थ का चित्रण करने से पलायन नहीं किया है। उन्होंने कहानियाँ कम लिखी हैं लेकिन जो भी लिखी हैं वह सशक्त और रोचक लिखी हैं। विश्वम्भरनाथ उपाध्याय लिखते हैं - ''ज्ञानरंजन झूठे बड़बोल और व्यर्थ दावे नहीं करते। वह इन कहानियों में सिर्फ यह दावा करते हैं कि समाज-व्यक्ति के संबंधों परिवर्तनजन्य तनावों और तालमेलों के वह केवल पर्यवेक्षक हैं। वह परिवर्तन के लिए संगठित प्रयत्नों में भाग लेते और उस संघर्ष से नई कहानीनुमा अपनी अवसादमई दशाओं के अतिक्रमण का भी दावा नहीं करते। लेखक होने का दावा करते हैं और एक साधारण व्यक्ति की आंतरिक ईमानदारी का भी, जो प्रलोभनों में पैर उखड़ने नहीं देती।''[8]

ज्ञानरंजन की कहानियों में अतीत के चित्रण के साथ-साथ वर्तमान जीवन के सूत्र भी मिलते हैं सत्यप्रकाश मिश्र कहते हैं - ''ज्ञान की कहानियों में अतीत के सिसकने की ध्वनि और जिद्दीपन के साथ-ही-साथ वर्तमान की ठंड़ी क्रुर और सभ्य आहट भी सुनाई पड़ती है।''[9] ज्ञानरंजन ने हमेशा मध्यवर्गीय परिवार को विषय के रूप में चूना है। उनकी हर कहानी में मध्यवर्ग है। उनकी संत्रास, घुटन, उनका पतन आदि का चित्रण किया है। हृदयेश लिखते हैं - ''ज्ञान की कहानियाँ मध्यम वर्ग के पारिवारिक संबंधों उसके युवा सदस्यों की आत्मकेंद्रीयता, स्खलन व पतन की निर्गम पड़ताल है।''[10]

भारतीय समाज में अनेक आदर्श तत्त्वों के साथ-साथ परंपरा और रूढ़ि आदि भी विशिष्ट प्रकार है। विवाह संस्कार एक भारतीय समाज में मंगल संस्कार माना जाता है। पारिवारिक संबंध में प्रेम, अपनापन, भाईचारा आदरभाव आदि होते हैं। भारतीय समाज में सांस्कृतिक उत्सवों को भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। पति-पत्नी का प्रेम भाव का संबंध होता है। समाज में अनेक रूढ़ि परंपराएँ होती हैं। जिसके कारण समाज का कभी-कभी नुकसान होता है। पूजा-पाठ, वृत-उपवास और धार्मिक-विधि-विधान भारतीय समाज में श्रेष्ठ माने जाते हैं। उपर्युक्त सभी आदर्श मूल्यों को लेकर समाज विकास करता रहता है। लेकिन आज की विषम परिस्थितियों ने समाज के साथ-साथ इनमें भी परिवर्तन लाया है। कहीं जगह इनका आज भी प्रयोग किया जाता है। पुरानी बुरी चीजें निकल चुकी हैं और नई अच्छी चीजों के साथ बुरी अधिक प्रमाण से उसमें घुस गई हैं। यही विवेच्य कहानीकार ज्ञानरंजन ने अपने कहानी साहित्य के द्वारा चित्रित करने का प्रयास किया है जो निम्नानुसार हैं -

## 4.3. दिशाहीन युवक -

युवक देश के आधारस्तंभ होते हैं। युवक ही परिवार को आगे चलकर संभालने का कार्य करते हैं। आज के युग में शिक्षित युवकों की प्रतिशत बढ़ रही है। उनको नौकरी के लिए दर-दर की ठोकरे खानी पड़ती हैं। जीवन के बहुत साल वह अपनी शिक्षा पर खर्च करते हैं। नौकरी के लिए नेता लोगों के पास जाते हैं। हर दिन सपने देखते हैं और दिखावेबाजी की प्रवृत्ति भी होती है। कभी-कभी तो असफल होने पर आत्महत्या का प्रयास करते हैं। अतुलवीर अरोड़ा कहते हैं - "ज्ञानरंजन की कहानियों के जरिए हम तक शिक्षित जन की मध्यवर्गीय आकांक्षाएँ, दिवास्वप्न, क्षणजीवी अंदाज, यौन उत्तेजनाएँ और नकली शालीनताएँ अपनी बरोबर की नपुसकताओं के साथ पहुँचाती हैं। ये सब कुल मिलाकर एक ऐसे समाज का ढ़ोल है जिसमें आदमी अपनी बाहरी शोभा के खोल और भीतरी घुटन की पोल से निरा अजिज आ चुका है। इसे दुर्भाग्य ही कहा जाना चाहिए कि सोचने-समझने और करने की तमाम क्षमताओं के बावजूद यह आदमी एक सड़िगल अंधेरे का शिकार है जिसे उसकी मानसिकता के मूलगत कलेवर में निहित विसंगतियों और विड़ंबनाओं ने बुना है।"[11] इसका यथार्थ चित्रण ज्ञानरंजन की 'दिवास्वप्नी', 'आत्महत्या', 'एक नमूना सार्थक दिन', 'छलांग' आदि कहानियों में दिखाई देता है।

'दिवास्वप्नी' कहानी का कथानायक इंदो जीवन में आई हर स्त्री की ओर प्रेम करने की दृष्टि से देखता है। 'छलांग' कहानी का कथानायक अपनी आयु से अधिक आयु की स्त्री के साथ शरीर संबंध रखने का प्रयास करता है। इसमें असफलता पाने पर वही युवक कायर होकर 'आत्महत्या' और 'एक नमूना सार्थक दिन' के युवक बन जाते हैं, जो जीवन समाप्त करना चाहते हैं। यदुनाथ सिंह कहते हैं - "ये तीनों कहानियों में आत्मरति या आत्महत्या की भावनाओं से ग्रस्त ऐसे युवक हैं जो किसी सार्थक मोटिफ से परिचलित प्रयत्नशालिता को केंद्रित किए हुए हैं। वे अपनी उन परिस्थितियों से पूरी तरह पराभूत हो चुके हैं जिन्होंने उनकी सारी शारीरिक, मानसिक क्षमताओं की किन्हीं सार्थक आशयों से न जुड़ने देकर मानसिक विकास, औरत के भूगोल और झमूर्त के स्वप्न दर्शन में उलझा दिया है।"[12]

'पिता' और 'शेष होते हुए' कहानी के युवक भी अपने जीवन का निश्चित ध्येय समझ नहीं पाए हैं। उन्होंने हर समय जीवन के साथ तालमेल बनाए रखने का प्रयास किया है। 'पिता' कहानी का कथानायक और पिता के विचारों से संघर्ष है। उसे सूझ नहीं रहा कि पिता के साथ कैसा व्यवहार करें। 'शेष

होते हुए' का युवक अपने ही परिवार में अकेला होता जा रहा है। वह हर वक्त यही सोचता है कि वह कैसे जीवन जीए। इसी विचार की लिखी ज्ञानरंजन की 'बहिर्गमन' कहानी है। जिसमें ऐसे युवक का चित्रण किया है जिसे परदेस जाने का आकर्षण है। परदेस जाने के लिए वह अपने परिवार को छोड़ देता है। विजय मोहन सिंह इस कहानी के विषय में कहते हैं - "पिछले कुछेक वर्षों में देश के मध्यम-वर्गीय पढ़े-लिखे युवकों की मानसिकता तथा महत्त्वकाक्षांओं में जो गुणात्मक परिवर्तन हुए हैं उसे यह कहानी शायद पहली बार रचनात्मक स्तर पर अपना लक्ष्य बनाती है।"[13] यहाँ स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन की कहानियों के युवक हमेशा प्रयत्नशील हैं। लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों ने उन्हें इतना विवश बना दिया है कि वह कुछ कर नहीं पाते हैं। उनके अपने सपने हैं उनकी अपनी आकांक्षाएँ मिट्टी में मिल जाती हैं। यदुनाथ सिंह कहते हैं - "ज्ञानरंजन की कहानियाँ में जहाँ टूटते हुए पारिवारिक संबंधों की करूणा जनक संक्रांति व्यक्त हुई। वहाँ उस युवक की मानसिकता भी चित्रित हुई है जो असीम आकांक्षाएँ, लालसाएँ लेकर जीवन की शुरूआत करता है लेकिन जीवन की दुर्द्धष विसंगतियों और अंतविरोधों में ठोकर खाकर उलझन खीझ और निराशा का लक्ष्य बनाता है।"[14] उसी प्रकार 'संबंध' कहानी के कथानायक का छोटा भाई नौकरी के लिए परेशान होकर आत्महत्या करने जाता है। 'क्षणजीवी' का कथानायक बी. ए. होकर बेकार है। 'घंटा' कहानी में कुंदन सरकार का चेला कथानायक नौकरी न मिलने के कारण बना है।

यहाँ स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन की कहानी में युवक दिशाहीन यौन कुंठाओं, असफलताओं, पुराने विचारों से संघर्ष और परदेसी आकर्षण आदि कारणों से हुए हैं लेकिन हर समय वह अपने विकास की ओर ही बढ़ने का प्रयास करते हैं। भले ही विषम परिस्थितियों के कारण उनको विकास करने में समस्याएँ निर्माण होती होगी।

## 4.4. पीढ़ियों का संघर्ष -

पीढ़ियों का संघर्ष समाज में हर समय चलता रहा है और रहेगा। समाज परिवर्तनशील होता है इस कारण पुराने आचार-विचार पीछे पड़ जाते हैं और नए आचार-विचार समाज में प्रचलित होते हैं। यह एक शाश्वत सत्य है। प्राचीन काल के विचार और आज के विचारों में बहुत बड़ी खाई दिखाई देती है। पुरानी पीढ़ी अपने विचार छोड़ने को तैयार नहीं होती और नई पीढ़ी उनके साथ तालमेल नहीं बिठा सकती। इस कारण परिवार

विघटित भी होते हैं। इसका यथार्थ चित्रण ज्ञानरंजन की कहानियों में दिखाई देता है। ओम भारती का मंतव्य द्रष्टव्य है - ''संक्रमण समय में बुजुर्ग पीढ़ी और नई पीढ़ी अपने-अपने विश्वासों और सोच के साथ एक संवादहीनता में शीत-युद्ध सा लड़ रहे हैं। वृद्धों या बड़ों के पास पूर्ववर्ती पीढ़ियों द्वारा अर्जित और संचित संस्कृति का गर्व है। छोटों के पास अपने हरे स्वप्न हैं और भविष्य का एक 'रफ ड्राफ्ट' है। एक तरफ पकी, पुष्ट, पुरानी परिपाटी है, दूसरी तरफ आयातित आधुनिकता है। ज्ञान की आँख दोनों पर है। वे आमीलित आँख की आधुनिकता के विरोध में है और बिछड़ती रूढ़ियों तथा उनके अंधनिर्वाह के दरखिलाफ। उनमें जहाँ नए की हिमायत है वहीं पुराने के परंपरा के अच्छे का बचाव भी।''[15] ज्ञानरंजन की 'पिता', 'कलह', 'फेंस के इधर और उधर', 'अमरूद का पेड़' आदि कहानियाँ उपर्युक्त विवेचन का समर्थन करती हैं।

'पिता' कहानी में पिता के पुराने विचारों और पुत्र के नए विचारों में संघर्ष है। 'कलह' कहानी में पिता-पुत्री के बीच संघर्ष है। पुत्री आधुनिक विचार की है इस कारण माता-पिता दोनों का विरोध करती हुई दिखाई देती है। 'फेंस के इधर और उधर' में कथानायक के परिवार में व्यर्थ ही पड़ोसी की चर्चा करते हैं तो कथानायक को लगता है, क्यों मेरे परिवारवाले अपना समय बरबाद कर रहे हैं। 'अमरूद का पेड़' कहानी में कथानायक 'अमरूद के पेड़' से प्रगति की चेतना लेता है लेकिन परिवार के अन्य सदस्य उसे काट देना चाहते हैं तो कथानायक नाराज हो जाता है।

यहाँ स्पष्ट है कि पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी में संघर्ष है लेकिन नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी का तिरस्कार नहीं करती उनके साथ संघर्ष करती है और साथ लेकर चलती है। जैसे की 'पिता' कहानी में पुत्र-पिता से कदम-कदम पर असहमति रखता हुआ भी उनसे विच्छेदित नहीं है। वह कहीं-न-कहीं उनसे एक संपृक्ति एक जुड़ने का अहसास और श्रद्धा का भाव रखता है। इसलिए यह कहानी जीवन-दृष्टि के अंतर के होते हुए भी पिता को नकारती नहीं, स्वीकारती है। संबंधों के बिखराव में भी पिता का यह स्वीकार ही ज्ञानरंजन की इस कहानी को बेजोड़ बना देता है। इसी प्रकार 'शेष होते हुए' का मझला, 'कलह' की स्वाति, 'अमरूद का पेड़' का कथानायक 'मैं' परिवारवालों से संघर्ष करते हैं, किंतु जुड़े रहे हैं। वैसे तो ज्ञानरंजन की हर कहानी का 'मैं' किसी-न-किसी से संघर्ष करता ही रहता है। जीवन सिंह कहते हैं - ''ज्ञानरंजन की कहानियों के 'मैं' का संघर्ष कहीं-न-कहीं इसी

मिथ्या तहजीब से संघर्ष है। कहीं यह अकेले व्यक्ति के अपने मन के भीतर है तो कहीं यह दो दोस्तों के बीच है तो कहीं यह दो परिवारों में है। उनकी हर कहानी के मुख्य पात्र की बेचैनी का कारण भी वही है।''[16]

## 4.5. बदलते मूल्य -

भारतीय समाज में परिवार एक ऐसी संस्था है जिसके कुछ आदर्श तत्त्व माने जाते हैं। जैसे प्रेमभाव, भाईचारा, अपनापन, आदरभाव, लगाव आदि के आधार पर भारतीय परिवार सुख और शांति से चलते रहते हैं। लेकिन आज के युग में यह सबकुछ बदलता हुआ दिखाई देता है। सत्यप्रकाश मिश्र लिखते हैं - ''भावुकता, आवेग, प्रेम, वात्सल्य, पारिवारिकता, भाईचारा आदि किस प्रकार मशीनीकरण की प्रक्रिया में समाप्त हो गया है यह 'लाभ केंद्रित व्यवस्था' का परिणाम है और ज्ञानरंजन ने उस परिणाम को परिवार के मानव-संबंधों के आधार पर ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन के स्तर पर भी व्यंजित किया है।''[17]

ज्ञानरंजन की कहानियों में जीवन की टूटती परंपराओं, बदलते संबंधों और विघटित मूल्यों की पीढ़ित मानसिकता को सजीवता के साथ रेखांकित किया है। उपर्युक्त मंतव्य का समर्थन 'कलह', 'खलनायिका' और 'बारूद के फूल', 'सीमाएँ', 'पिता', 'दिलचस्पी' आदि कहानियाँ करती हैं। लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय कहते हैं - ''ज्ञानरंजन की कहानियाँ व्यष्टि चिंतन का परिणाम है, जिनमें मध्यवर्गीय जीवन की तथाकथित आधुनिकता एवं विघटित मानव-मूल्यों की ओर संकेत है और उनकी अनुपयोगिता एवं निर्जीविता पर कठोर प्रहार है।''[18]

'कलह' कहानी में स्वाति अपने माता-पिता दोनों के प्रति नाराज है क्योंकि पिता उसके मन के विरूद्ध बात कर रहे हैं और माता उसकी सुनती नहीं। स्वाति के विचार आधुनिक हैं लेकिन पूर्णत: नहीं हैं, वह माँ को कहती है - ''माँ भी कितनी अपाहिज और मूर्ख है, स्वाति झुँझला गई।''[19] यहाँ माँ के प्रति पुत्री का आदरभाव नहीं है।

'खलनायिका और बारूद के फूल' कहानी में परिवर्तित प्रेम का चित्रण हुआ है। प्रेम ऐसी चीज है जो बदलती नहीं लेकिन कहानी की नायिका जब तक शिक्षा-जीवन था तब तक नायक के साथ घूमती है लेकिन अंत में दूसरे के साथ शादी करती है। यहाँ प्रेम का मूल्य कम हुआ दिखाई देता है।

आज के युग में परिवार में बड़े भाई के सामने बहन खुले दिल से बोल सकती है इसका चित्रण 'दिलचस्पी' कहनी में हुआ है। यहाँ बंधन से मुक्त स्त्री जीवन दिखाई देता है। 'क्षणजीवी' का नायक मनिआर्डर देर से आ रही है इस कारण पिता के मृत्यु की कामना करता है। 'शेष होते हुए' में मझला अपने ही परिवार में पराया होता जा रहा है। 'संबंध' कहानी में नायक का बड़ा भाई छोटे भाई को सरलता से गाल्यिाँ देता है और न माता-पिता का आदर करता है। सभी को वह क्रोध भाव से देखता है। यहाँ भाई-भाई के बीच क्रोध दिखाई देता है। 'यात्रा' कहानी का कथानायक 'मैं' पिता की मृत्यु होने पर भी दु:खी नहीं होता है। 'मनहूस बंगला' में एक परिवार के दो बेटे पिता की मृत्यु होने पर अपनी पत्नियों को लेकर शहर भाग जाते हैं और बूढ़ी माँ अकेली उसी बंगले में पड़ी रही थी। यहाँ माँ के प्रति पुत्र अपने कर्तव्य पालन के प्रति असफल हुए देखाई देते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से हम यह कह सकते हैं कि वर्तमान युग में पारिवारिक मूल्य बदल रहे हैं। पूरी तरह से उनका रूप न बदला हो लेकिन परिस्थितियों के कारण क्यों न हो, मूल्य में परिवर्तन आ गया है। यहाँ स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन की कहानियों में मूल्य बदले हुए दिखाई देते हैं। उसमें कभी विवशता, परिस्थितियाँ तो कभी व्यक्तिवाद की भावना, स्वतंत्रता के लिए भी मूल्य में परिवर्तन आया हुआ दिखाई देता है। पुष्पपाल सिंह का मंतव्य दृष्टव्य है - ''विज्ञानीकरण और आद्योगीकरण के कारण द्रूतगति से विघटित मूल्य परिवर्तन से परंपरा-प्रेमी मनुष्य बहुत भीतर तक टूटा है। परंपरा-प्रेमी व्यक्ति ही नहीं अपितु मूल्य-परिवर्तन मनुष्य बहुत भीतर तक टूटा है। परंपरा-प्रेमी व्यक्ति ही नहीं अपितु मूल्य-परिवर्तन का हामी व्यक्ति भी परिवर्तन की प्रक्रिया में पग मिलाकर नहीं चल सका है। इस सबको आधुनिक जीवन में मूल्य टूटने का दर्द कहा जा सकता है। आधुनिक कहानी ने प्रत्येक क्षेत्र में घटित इस मूल्य परिवर्तन और मूल्य टूटने के दर्द को लक्षित किया है।''[20]

## 4.6. प्रेम की विद्रुपता -

प्रेम में विश्वास-महत्त्वपूर्ण होता है। सच्चा प्रेम कभी बदलता नहीं। प्रेम कभी झूठ नहीं होता और प्रेम में जाति-पाति, रूप-रंग आदि को गौण स्थान होता है। किंतु आज के युग में प्रेम के इन गुणों की जगह वासना, ऊब, धोका आदि आ गए हैं। आज प्रेम मन की चीज नहीं तन की चीज बन गया है। त्वचा पर प्रेम करनेवालों की संख्या बढ़ रही है। प्रेम में आज वासना दिखाई देती है। प्रेम पवित्र माना जाता है लेकिन आज वह

अपवित्र हो रहा है। प्रल्हाद अग्रवाल कहते हैं - ''प्रेम एक विराट भावना है किंतु पूर्णतया भावात्मक धरातल पर प्रतिष्ठित होने से एकांगी है। क्षय होते हुए पारिवारिक और सामाजिक संबंधों के कारण भी प्रेम की स्थितियाँ और मान्यताएँ बदली।''[21] प्रेम कहानी का परंपरागत ढाँचा अब बदल गया है। पहले प्रेम कहानी लिखने की पद्धति और आधुनिक युग में बहुत बदल हो गया है। लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय कहते हैं - ''प्रेम के संबंध में इस स्वातंत्र्योत्तर काल में अनेक परिवर्तन देखने को मिले हैं। इस काल के पूर्व प्रेमचंद या यशपाल की प्रेम-कहानियों में जो सामाजिकता या जैनेंद्र कुमार और अज्ञेय की प्रेम कहानियों में जो भावुकता लक्षित होती थी वह इस काल में नहीं दिखाई पड़ती और प्रेम संबंधों में भी स्वार्थ, वासना, उद्देश्य तथा अपने-अपने व्यक्तित्त्वों के परस्पर उन्मीलन की सफलता या असफलता लक्षित होती है। भावुकता से भरा प्रेम इस काल में बहुत ही कम कहानियों में देखने को मिला है। प्रेम में स्वार्थ से अभिप्राय उस सामाजिक परिवर्तन से है, जिसमें नारी इतनी 'आधुनिक' और 'प्रगतिशील' बन गई है कि उसे अफसरों, मंत्रियों एवं दूसरे अधिकार प्राप्त लोगों से प्रेम करने, नारीत्व बेचने और स्वार्थ पूर्ति करने का साधन बनाया गया।''[22] यहाँ स्पष्ट होता है कि प्रेम का स्वरूप किस प्रकार और किन कारणों से परिवर्तित हुआ है।

आज के युग में प्रेम कहानी में व्यंग्य, विद्रुपता, प्रेमहीनता, अजनबीपन आदि का चित्रण अधिक दिखाई देता है। विवेच्य कहानीकार ज्ञानरंजन की 'चुप्पियाँ', 'याद और याद', 'दिवास्वप्नी', 'खलनायिका' और 'बारूद के फूल', 'सीमाएँ', 'छलांग', 'हास्यारस', 'दाम्पत्य', 'रचना-प्रक्रिया' कहानियाँ उपर्युक्त मंतव्य का समर्थन करती हैं। सहजता से देखे तो यह प्रेम की कहानी लगती है और बारिकी से देखने पर सच्चाई ध्यान में आती है। परमानंद श्रीवास्तव का यह मंतव्य द्रष्टव्य होगा कि ''आज की कहानी का काफी बड़ा हिस्सा स्त्री-पुरूष संबंधों की विड़ंबनाओं से घिरा है। फर्क इतना ही है कि जहाँ कुछ पहले की कहानी में व्यक्त स्त्री-पुरूष संबंधों में प्रेम की गंभीर करूणा आत्मीयता ही ध्यान आकृष्ट करती थी। वहाँ इधर के कुछ वर्षों में प्रेमहीनता, प्रेम की निरर्थकता, प्रेम प्रसंगों में अजनबीपन, आक्रमक ढ़ंग से उभरनेवाला व्यंग्यपूर्ण तनाव-संबंध या इन्हीं से मिलते-जुलते अनुभव दिखाई देते हैं। स्त्री के प्रति पवित्रता या गरिमा या करूणा का भाव क्षीण होता गया है और कई बार यह रवैया स्त्री-पुरूष संबंधों को अपमान जनक परिणतियों तक भी ले जाता है।''[23]

ज्ञानरंजन ने प्रेम विषयक अधिक कहानियाँ नहीं लिखी लेकिन जो भी लिखी हैं वह सशक्त लिखी हैं। ममता कालिया लिखती हैं - ''ज्ञान अपने सीमित संसार को बखूबी पहचानते हैं, इसमें वे जेन ऑस्टेन की तरह पारंगत हैं। मौसम की कोई महक पेड़ पर बैठा कोई परिंदा, प्रेमिका की कोई चंटई उनकी तेज आँखों से बच कर नहीं निकल सकती। 'खलनायिका और बारूद के फूल', 'हास्यरस', 'दाम्पत्य', 'रचना-प्रक्रिया' और ऐसी अन्य अनेक कहानियों में ज्ञान प्रेम-व्यापार की समस्त चालाकियों को झोटा पकड़ उजागर कर देते हैं।''[24]

ज्ञानरंजन की 'छलांग' कहानी राजेंद्र अवस्थी द्वारा संपादित कहानी संग्रह 'श्रेष्ठ प्रेम कहानियाँ' में सम्मिलित की गई हैं, परंतु वीरेंद्र सक्सेना अपना मंतव्य कहते हैं कि - ''हमारा विचार है यह 'प्रेम कहानी' न होकर मात्र एक नवयुवक की शारीरिक उत्सुकता का चित्रण करनेवाली रचना है।''[25] यहाँ वीरेंद्र सक्सेना का मंतव्य सार्थक है क्योंकि इस कहानी में प्रेम का एक भी तत्त्व दिखाई नहीं देता है। कथानायक हमेशा वासना की भावना से ही स्त्री के शरीर की ओर आकृष्ट रहता है।

'दिवास्वप्नी' कहानी में प्रेमहीनता दिखाई देती है। कथानायक इंदो मीरा से प्रेम करता है लेकिन उसे मिलने देर होती तो दूसरी स्त्री के साथ प्रेम करता है। यहाँ तक ही नहीं मिसेज भट्टाचार्य के नकारने पर वह ड़ेजी नामक वेश्या के पास भी जाता है। यहाँ स्पष्ट है कि न उसका प्रेम सच्चा है न उन स्त्रियों का प्रेम सच्चा था मतलब के लिए प्रेम में बदलाव आया हुआ दिखाई देता है।

'खलनायिका और बारूद के फूल' की प्रेमिका अपने कथानायक को जीवन के अंत तक साथ देने का वादा करती है लेकिन जल्दी ही कथानायक से छुटकार पाकर दूसरे के साथ विवाह कर लेती है। यहाँ सिर्फ वक्त बिताने के लिए प्रेम दिखाई देता है। 'सीमाएँ' कहानी में कथानायक और सविता दोनों का प्रेम सच्चा दिखाई देता है। लेकिन यहाँ प्रेम को व्यंगात्मक तरीके से देखा है। विवेक खूद प्रेम करता है, लेकिन अपनी बहन सविता का प्रेम करना उसे पसंद नहीं है। यहाँ प्रेम की विद्रुपता दिखाई देती है। प्रल्हाद अग्रवाल इस कहानी के विषय में लिखते हैं - ''ज्ञानरंजन की 'सीमाएँ', 'खलनायिका और बारूद के फूल' प्रेम कहानियाँ हैं। इनमें प्रेम के प्रति स्वस्थ नजरिया भी है और आधुनिक दृष्टिकोण का सही तकाजा भी।''[26] यह सीमा मध्यवर्गीय परिवेश की कृत्रिम उदारता की गहरी अंतविरोधी विड़ंबनाओं को पूरे तीखेपन से प्रत्यक्ष कर जाती है। विड़ंबना की पराकाष्ठा

यह कि विवेक स्वयं अपने दोस्त की बहन प्रमिला से प्यार कर रहा था और अब प्रमिला ने उसे अन्यत्र विवाह तय होने के कारण ठेंगा दिखा दिया था।

'छलांग' कहानी में एक प्रौढ़ से प्रेमसंबंध की विद्रुपता का चित्रण हुआ है। वहाँ प्रेम के नाम पर एक निठल्लापन है। 'चुप्पियाँ' कहानी में सच्चा प्रेम दिखाई देता है लेकिन कथानायक और प्रेमिका अंत तक खुले मन से एक-दूसरे से कह नहीं पाए। यहाँ सिर्फ घुटन युक्त प्रेम दिखाई देता है। 'रचना-प्रक्रिया' कहानी में प्रेम की गंभीरता को गंभीर हल्के आघात से विचलित करनेवाली एक अन्य उल्लेखनीय कहानी है एक कस्बाई परिवेश में प्रेम की संभावनाएँ होती तो हैं, पर यहाँ दखलंदाजी हर मोड़ पर होती रहती है इसलिए कहानी के नायक 'मैं' को परिवेश और परिवेशक अंतर व्यग्र किए रहता है। अतुलवीर अरोड़ा लिखती हैं - ''दूसरे अभियान में शिक्षित आदमी की यौन-कुण्ठाओं और यौन-संबंधों के नकली दर्शन के सारे खोहों में से होकर खालिस यौन एक पहुँचता है। इसे भी व्यंग्य ने खाली नहीं छोड़ा है। ऐसी कहानियों में 'चुप्पियाँ', 'याद और याद' के धीमे स्वर अंतत 'हास्यरस', 'दांपत्य' और 'रचना-प्रक्रिया' जैसी प्रगल्भ रचनाओं के सधे हुए स्वरों तक पहुँचकर विश्राम लेते हैं।''[27]

उपर्युक्त कहानियों के विवेचन से ध्यान में आ जाता है कि ज्ञानरंजन ने प्रेम कहानी का अलग ढाँचा बनाया है। इसमें प्रेम तो है नहीं लेकिन हर समय प्रेम के बदलते स्वरूप, शारीरिक ऊब मिटाने, वक्त बिताने, ढोंगी प्रेम, निठल्लापन तथा घुटन युक्त प्रेम की ओर उंगली निर्देशित की है। 'चुप्पियाँ' कहानी में सच्चा प्रेम है लेकिन वह भी घुटन युक्त है।

4.6.1. देहाकर्षण -

ज्ञानरंजन की 'रचना-प्रक्रिया' कहानी का नायक अपनी प्रेमिका को शारीरिक प्रेम के लिए विफलता को खूब समझता है। उसका पहला प्रेम उसके पवित्रता के कारण ही असफल हो चुका हैं। वह अपने को सावधान करता है कि कहीं पवित्रता का दौरा फिर से न पड़ जाए और घटनाओं की आवृत्ति न हो। वह खुद को समझाता है, ''तुम्हारे पवित्र व्यवहार से उसकी तबीयत हौदा हो सकती है। इससे बेहतर दूसरा मौका न मिलेगा, उसे काबू कर लो।''[28] नायक, नायिका से शरीर संबंध स्थापित कर लेता है और नायिका उसे घृणित

समझने के स्थान पर मस्त हो जाती है और उसे तन-मन से चाहने लगती है। यहाँ दिखाई देता है कि सिर्फ शरीर का आकर्षण ही प्रेम का प्रयोजन दिखाई देता है।

### 4.6.2. ऊब मिटाने के लिए प्रेम : प्रेम में ऊब -

आज का प्रेम आड़ंबर मात्र है और इस सारे आड़ंबर के मूल में है अपनी शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति। ज्ञानरंजन की 'दिवास्वप्नी' में इंदो क्रमशः मीरा, मिसेज भट्टाचार्य व डेजी से जुड़ता है, परंतु वास्तव में वह किसी के प्रति भी पूरी तरह समर्पित नहीं है। उनके साथ इंदो के संबंध समय को आनंदपूर्वक बिताने का साधनभर है। दूसरी तरफ मीरा, मिसेज भट्टाचार्य व डेजी भी अपने-अपने स्वार्थों को दृष्टि में रख इंदो से प्रेम संबंध बनाए हुए है। वह पति के साथ-साथ प्रेमी को भी सँभाले रखना चाहती है। इससे वह अपने इस गर्व की तुष्टि पाती है कि - "उसे जिंदगी भर एकाकी होकर प्यार करनेवाला कोई है।"[29] मिसेज भट्टाचार्य पति के व्यस्त रहने के कारण अकेली हैं। अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए वह अपनी सुविधानुसार इंदो का साथ पाना चाहती है। डेजी 'काल-गर्ल' है इंदो के प्रति उसका व्यवहार उसका चुलबुलापन या चुहल भर है। स्पष्ट है कि सभी अपने-अपने स्वार्थों को पूर्ण करने के लिए प्रेम का ढ़ोंग कर रहे हैं।

### 4.6.3. स्वार्थ आधारित अस्थिर प्रेम -

प्रेम अब बहुत अस्थिर भावना बनकर रह गया है। प्रेम-पात्र का बदल जाना अत्यंत साधारण बात है। ज्ञानरंजन की 'याद और याद' में प्रेमिका ने प्रेमी को बहुत चालाकी से यह कहकर छोड़ दिया कि "तुम्हें बहुत-सी लड़कियाँ प्यार कर सकती हैं।"[30] अब वह मुहब्बत की नई-नई मोजेक स्टेयर्स बना रही है और निरंतर आगे बढ़ती जा रही है।

### 4.6.4. प्रेम में असफलता और उसके बाद -

विभिन्न आर्थिक, सामाजिक एवं पारिवारिक कारण प्रेम की असफलता में बाधक बन जाते हैं, जिससे प्रेमी-प्रमिका को अलग होना पड़ता है। प्रेम में असफल होने पर भिन्न-भिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न व्यवहार करते हैं। ज्ञानरंजन की 'रचना-प्रक्रिया' का नायक एक ऐसा ही प्रेमी है जो अनेक प्रेमसंबंध बना चुका है। प्रेम में

असफल होने पर वह निराश नहीं होता अपितु अगले प्रेम में सफलता पाने के लिए स्वयं को तैयार करता है - ''मैं भले ही सुस्त, उदास और निद्रिय रहा करूँ लेकिन अंदर से मैं किसी को भी वकओव्हर नहीं देनेवाला लेकिन फिलहाल मैं खाली था और अपने बिस्तर पर पड़े-पड़े भाग्य की प्रतीक्षा किया करता था।''[31]

अधिकांश भारतीय प्रेमिकाएँ विवाह कहीं और हो जाने पर अपने प्रेम को 'आत्मिक प्रेम' का रूप देकर अपने नए जीवन से सामंजस्य स्थापित कर लेती हैं। ज्ञानरंजन की 'खलनायिका और बारूद के फूल' में सुमन का विवाह अन्यत्र तय हो जाने पर वह अपने प्रेमी से कहती है - ''मुझे गलतं मत समझना, मेरा प्रेम आत्मा का है। वह मरते दम तक क्या जन्म-जन्मांतर तक जीवित रहेगा।''[32] कई बार प्रेमी प्रेमिका अन्यत्र विवाह हो जाने पर भी अपने पुराने संबंधों को भी बनाए रखना चाहते हैं। ज्ञानरंजन की 'दिवास्वप्नी' में मीरा विवाह के बाद भी इंदो से संबंध बनाए रखना चाहती है। वह ऐसी प्रेमिका है जो पति के अलावा बड़े मजे में अपने पुराने या नए प्रेमियों को भी सँभाले रहती है।

### 4.6.5. अवैध यौन -

यौन समस्या का चित्रण ज्ञानरंजन की कई कहानियों में दिखाई देता है। सत्यप्रकाश मिश्र लिखते हैं - ''पहले अभियान की इन कुछेक कहानियों ने ज्ञानरंजन के रचना संसार का एक अद्‌र्ध-वृत्त बनाने में जो योगदान दिया है उसके समीप से गुजरने के बाद हम दूसरे अद्‌र्ध-वृत्त की ओर बढ़ सकते हैं जो मध्यवर्गीय बुद्‌धिजीवी की यौन कुंठाओं और और यौन चिंताओं का संसार रचता है। इस संसार में असफल प्रेम और बोलते या चुप्प यौन कुण्ठा जगत से लेकर यौन उदात्तता तक की यात्रा उपलब्ध होती है।''[33]

'दिवास्वप्नी' कहानी में इंदो अपनी उम्र से अधिक उम्र की मिसेज भट्टाचार्य की ओर आकृष्ट होता है। यहाँ केवल प्रेम नहीं तो इंदो की कुंठीत काम भावना भी है। 'छलांग' कहानी में भी कथानायक श्रीमती ज्वेल की ओर इतना आकृष्ट होता है वह कहता भी है - '' हे, भगवान। ऐसा हो कि सारी दुनिया मर जाय (घरवाले भी) बस मैं और श्रीमती ज्वेल ही बचें। फिर कोई दिक्कत नहीं होगी।''[34] यहाँ स्पष्ट है कि कथानायक 'मैं' के मन में काम भावना है। वह सोचता है - ''कभी ऐसा भी हुआ कि मौका मुझे भरपूर लगता और मैं सोचता, फलों की चोरी के लिए जैसे चारदीवारियाँ कूद जाता हूँ, उसी तरह श्रीमती ज्वेल पर कूद पड़ूँ।''[35] श्रीयुत ज्वेल की उम्र

श्रीमती ज्वेल की उम्र से अधिक है इस कारण वह कथानायक युवक की ओर आकृष्ट होती है। इतना ही नहीं तो कभी उसके साथ सोती भी है - ''श्रीमती ज्वेल ने मुझे अपने पास लिटाया हुआ था। ऐसा लगता था उनके स्तन मेरे इतने करीब थे कि वे मुझे दूध पिलाना चाहती है।''[36] इस प्रकार यहाँ स्पष्ट हो जाता है कि श्रीमती ज्वेल और कथानायक दोनों अतृप्त काम भावनाओं के कारण पास आते हैं।

'रचना-प्रक्रिया' में भी यह समस्या दिखाई दी है। नायिका अपने-पापा से खुले मन से कहती है कि मुझे प्यार करना है और मैं अब थोड़े दिन भी ठहर नहीं सकती, पापा उसे और एक-दो साल इंतजार करने के लिए कहने पर वह कहती है - ''पर अब मैं इंतजार नहीं कर सकती। मैं इंतजार नहीं कर सकती पापा, मैं इंतजार नहीं कर सकती।''[37]

यहाँ उपर्युक्त विवेचन से ध्यान में आता है कि ज्ञानरंजन ने अपनी कहानियों का विषय प्रेम की जगह उसके परिवर्तित रूप पर व्यंग करना है। न वे कहानियाँ रूमानी हैं न काल्पनीक। वह तो रोज के जीवन की कहानियाँ हैं। भीष्म साहनी कहते हैं - ''आस-पास का जीवन अपनी सभी विड़ंबनाओं के साथ लेखक का ध्यान अपनी ओर खींचने लगता है, लेखक के संवेदन के सामने परिवेश के पट खुलने लगते हैं। उस दौर की अनेक कहानियाँ प्रेम कहानियाँ हैं, पर वे रूमानी प्रेम की कहानियाँ नहीं, रोजमर्रा की घरेलू जिंदगी इन पर हावी है।''[38]

यहाँ स्पष्ट है कि साठोत्तरी कहानीकारों ने प्रेमहीनता, विद्रुपता, मक्कारी, व्यर्थता आदि पर प्रहार किया है लेकिन ऐसी प्रेम कहानी में आंतरीक अर्थ से पाठक को कुछ-न-कुछ बताते रहते हैं। जैसे ज्ञानरंजन 'छलांग' में एक कुंठित युवक की काम भावना का चित्रण किया है। सत्यप्रकाश मिश्र के उद्धरण से और भी स्पष्टता आएगी - ''वस्तुत: इन सभी प्रेम केंद्रित कहानियों की विशेषता ही यही है कि इनमें बदलते हुए मानव-संबंधों या नए तालमेल के कारण प्रेम आदि शब्दों के अर्थ बदल गए हैं। भावना का यांत्रिकता में यह परिवर्तन सामाजिक यथार्थ की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।''[39]

## 4.7. महानगरीय खोखली चकाचौंध -

स्वतंत्रता के बाद देश में औद्योगीकरण बढ़ गया, शिक्षा का प्रसार बढ़ गया इस कारण लोग शहर की ओर अधिक आकृष्ट हुए। लेकिन गाँव से अधिक कठिन समस्याएँ वहाँ निर्माण हो गई। आज महानगरों

में अजनबीपन, अकेलापन, व्यक्तिवाद, परायापन आदि अनेक समस्याएँ दिखाई देती हैं। गुंड़ागर्दी दादागिरी, हत्याएँ तो सर्वसाधारण हो गई हैं। कहानीकार ज्ञानरंजन ने महानगरीय जीवन का चित्रण प्रमुख रूप से दो कहानियों में ही किया है। प्रल्हाद अग्रवाल का कथन दृष्टव्य है - "स्वतंत्रता के बाद के भारतीय समाज की जितनी बेहतर तस्वीर कहानी बताती है उतनी अन्य कोई विधा नहीं। यह तस्वीर अपने देशकाल के विषम वातावरण की आंतरिक कुरूपताओं और परिवेश के सक्रांत जीवन के विविध पक्षों को प्रस्तुत करती है।"[40]

शहरों में हर कोई अपने ही काम में रत होता है न वे अपने दोस्तों को समय दे पाते हैं न परिवार में रह सकते हैं। 'अनुभव' कहानी का कथानायक बड़ी आशा के साथ अपने दोस्त गणेश से मिलने जाता है लेकिन गणेश उसके साथ अधिक वक्त बोल नहीं सकता क्योंकि उसे काम है। शहरों की गंदगी का वर्णन कहानीकार करता है - "चौक की बात छोड़ो, यहाँ सिविल लाइन्स में देखो ड़ंड़ा चला-चला कर इतना काम हुआ है लेकिन शाम होते ही तुम देखो साली कोई गली ऐसी नहीं जहाँ बच्चे पाखाना नहीं करने बैठे हों। इस तरह से शहर नहीं बनता।"[41] कथानायक को दिन में शहर अच्छा लगता है लेकिन रात को नाराज हो जाता है। क्योंकि दिन में शहरों की स्थिति एक होती है और रात में अलग होती है। कथानायक कहता है - "सड़क के किनारे कोठरियों के बाहर सोनेवालों की कतारें थी। एक कतार सोनेवालों की उस नल से भी निकली थी जिसमें सुबह पानी आने वाला था। ये अधिकांश बच्चे-बच्चियाँ थे। हाथ-गाड़ी पर दिनभर सामान बेचनेवालों ने अपनी गाड़ियों को रात में खाट बना लिया था। दूर तक फुटपाथ ऐसा लगता था जैसे दुर्घटना के बाद अस्त-व्यस्त लाशें पड़ी हो।"[42] यहाँ आवास की समस्या दिखाई देती है।

नायक रात में वेश्या को बीस रूपये देकर खाली हात जब वापस घर जाता है तो रास्ते में देखता है एक बूढ़ा शरीर से क्षीण हुआ लालटेन लेकर रेल की पटरी पर खड़ा है तो नायक अपने आप से कहता है - "थू है तुम्हारी को, तुम पत्थर हो गए हो। ये देखो, ये असली शहर है, असली हिंदुस्तान, इनके लिए तुम्हारा दिल हमेशा क्यों नहीं रोता है।"[43]

रोजी-रोटी के लिए शहरों में जाकर वहाँ गलत काम करने की प्रवृत्ति आज बढ़ती जा रही है। गलत काम से अधिक पैसा मिलता है। गाँव का एखाद व्यक्ति शहर में जाकर गलत काम करता है और थोड़े ही दिनों में सुधर जाता है। बाद में वही गाँव के व्यक्ति को मूर्ख समझता है। 'बहिर्गमन' कहानी में मनोहर दिल्ली

शहर में चीनी की कालाबाजारी करता है और लोगों को परदेस के पासपोर्ट अधिक रूपयों में बेचता है। पहले मनोहर अपने कस्बे से तंग आकर शहर में आया था इस कारण पहले उसे गंदा काम मिलने पर भी खुश था। वह कहता था - ''आज मैं पहली बार खुश हुआ हूँ। मैं जैसे बंदीगृह की यातना से रिहा-होने जा रहा हूँ।''[44] पैसों के लिए मनोहर गलत काम करता है।

'रचना-प्रक्रिया' कहानी में कथानायक शहरी प्रेम का वर्णन करता है। ''पहले प्रेम के पीछे कुरबानी भी बहुत होती थी पर अब ऐसा नहीं की बराबर है क्योंकि एक प्रेम चला जाता है तो दूसरा तुरंत उपस्थित हो जाता है।''[45] आगे कहता है - ''बड़े शहरों में जब भी जाए, जनस्थानों पर आप देखेंगे, लड़के के साथ लड़की या दो लड़कों के बीच मुस्कुराती हुई एक लड़की या दो लड़कियों के साथ एक फर्राट लड़का।''[46] इस प्रकार शहरों में प्रेम करनेवालों को किसी का भी ड़र नहीं है। न बड़ों का आदर है न आपमान की लाज है। शहरों में खेलने-कुदने के लिए जगह नहीं होती इसका चित्रण कहानी में है - ''यह सर्वसामान्य सच्चाई है कि बड़े शहरों में भीड़ पागल तथा व्यस्त होती है, वहाँ खेलने-कुदने, लुका-छिपी की गुंजाइश रहती है।''[47]

उपर्युक्त विवेचन से ध्यान में आता है कि ज्ञानरंजन ने दो ही कहानियों में महानगरों का यथार्थ चित्रण है। नगरों में बहुत से लोग दूर-दूर से तथा गाँवों-कस्बों से आए हुए होते हैं। लाचारी, धोकाधड़ी और दिन में बड़ी-बड़ी इमारते दिखाई देनेवाले शहर रात को अलग होते हैं। इसी शहरी जीवन का चित्रण ज्ञानरंजन ने अत्यंत मार्मिकता से किया है।

## 4.8. अकेलापन -

आज विज्ञान के कारण संसार जितना सीमित हो गया है उसी तरह आज मानव-मानव से दूर होता जा रहा है। व्यक्ति शरीर से एक साथ होते हैं मन से कहीं और होते हैं। आज हर व्यक्ति के चेहरे के पीछे और एक चेहरा है। हर समय परिस्थिति के अनुसार अपना मुखौटा बदलना व्यक्तियों का धर्म बन गया है। आज व्यक्ति ने अपने लिए बहुत सारी साधन-सुविधाएँ इकठ्ठा की है। अलग-अलग संशोधन किए हैं। फिर भी व्यक्ति आज अपने आप को अकेला महसूस करता है। अनेक सदस्यों के परिवार में भी व्यक्ति अपने आप को अकेला महसूस कर रहा है। हर व्यक्ति-व्यक्ति से ड़र रहा है। एक ही परिवार के अनेक सदस्य एक-दूसरे के प्रति

शंका की दृष्टि से देखते हैं। इस कारण आज परिवार विघटन की प्रक्रिया बढ़ रही है। यह गाँव तथा शहरों में भी दिखाई देता है। फिर भी गाँव से अधिक शहरों में अकेलापन अधिक महसूस होता है। रामदरश मिश्र कहते हैं - ''गाँवों और कस्बों के जीवन में भी भीतरी जटिलता धीरे-धीरे उभर रही है उसमें भी एकाकीपन और संबंधों की दुरूहता आ रही है, बौद्धिकता, राजनीति और व्यावसायिकता ने बहुत हद तक उसकी भावुकता सरल संवेदना और विश्वासप्रियता को आक्रांत किया है तो भी गाँवों की संक्रांति अभी बहुत कुछ आर्थिक और सामाजिक है किंतु आधुनिक नगर जीवन में संक्रांति अत्यधिक मानसिक है। व्यक्ति अपने में संक्रांति अत्याधिक मानसिक है। व्यक्ति अपने भरे-पूरे परिवार में भीड़-भाड़ में अपने को निपट अकेला पा रहा है। समृद्धि के बीच भी अथह रिक्तता का अहसास होता है। प्रिय से प्रिय व्यक्ति के संग रहकर भी अजीब निस्संगता का बोध उसे होता है।''[48]

'कलह' कहानी में स्वाति के माता-पिता में संघर्ष है और वे स्वाति को बोलते नहीं इस कारण माता-पिता के होते हुए भी स्वाति अकेली जीवन जी रही है। उसी प्रकार 'शेष होते हुए' कहानी में भी इसी समस्या का चित्रण दिखाई देता है। सुरेश सिन्हा कहते हैं - ''परिवार में व्यक्ति आज किस प्रकार अजनबी बन जाता है और अकेलेपन में घुटा-घुटा जीवन जीता है इस सत्य को 'शेष होते हुए' में उन्होंने बड़ी सूक्ष्मता और गहन अंतर्दृष्टि से उभारा है।''[49] कहानी का कथानायक मझला छुट्टियों में घर आता है तो कोई उसकी ओर ध्यान नहीं देता। भैया-भाभी, बहन तारा अपने-अपने कमरे में सोए हैं। जब छुट्टियाँ खत्म होती हैं तो सब लोग उसके जाने का इंतजार करते हैं। परिवार में इतने लोग होने पर भी वह अकेलापन महसूस करता है। सगी माँ उसे बोलने से ड़रती है। कहानीकार एक जगह वर्णन करता है - ''घर में सात लोग हैं और सात बार टेबल पर खाना रखा जाता है। मझला भी इस व्यवस्था में आसानी से शामिल हो जाता है, क्योंकि किसी को भी एक दूसरे का सामना करना सरल नहीं लगता। कोई गंभीर दुर्घटना ही शायद लोगों को एक स्थान पर एकत्र कर सकती है।''[50]

ज्ञानरंजन की कहानी 'याद और याद' में कथानायक 'मैं' को व्यतीत के काममूलक तृप्ति के क्षण याद आते हैं तो उस याद में नए जीवन अनुभवों में गुंथा अकेलापन मन-ही-मन पसरने लगता है। उसे अपनी पत्नी शकुन की याद सताती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि नगर जीवन में अकेलापन यह एक आदमी की आदत बन गई है। परिवार में विपरित घटना, व्यक्तिवाद की भावना, अतृप्त काम वासना आदि कारणों से अकेलापन बढ़ रहा है। रामदरश मिश्र कहते हैं - ''नगर जीवन से संबंध नई कहानी यह जानती है कि अकेलापन आज के आदमी की नियति बन गई है, वह भीड़ में अपने को ही कई पर्तों में लपेट कर जीता है। नागरिक परिवेश के दबाव में वह अनेक प्रकार की मानसिक विकृतियों, ग्रंथियों और नागरिक असंगतियों का शिकार बन जाता है।''[51]

## 4.9. संत्रास -

आधुनिक युग को अकेलापन, अजनबीपन तथा पराएपन की तरह संत्रास भी उसकी एक देन है। संत्रास के अर्थ की स्पष्टता के लिए प्रल्हाद अग्रवाल का मत दृष्टव्य होगा - ''भारत में संत्रास की स्थिति बहुत अलग है, युद्ध की विभीषिका से भी अधिक क्रूर। भूख और निराशा से ग्रसित मानव जीवन, दिन प्रतिदिन और अधिक बदतर होता हुआ निम्न मध्यवर्गीय समाज, क्रमशः छीनते हुए संस्कार मानसिक घुटन के बीच पराभव की ओर अग्रसर युवा पीढ़ी और इतने अधिक प्रबल वैयक्तिक स्वार्थ की आदमी स्वयं अपना हित-अहित नहीं सोचता। इसलिए हमारे यहाँ संत्रास अलग किस्म का है। विदेशों में माँ-बाप से संबंध टूटने पर उन्हें कोई पीड़ा नहीं होती, यह उनके लिए एक तरह से स्वाभाविक है किंतु हमारे यहाँ यही बात अंतर्मन में संघर्ष की विधानक बन जाती है। संबंधों का टूटना हमारे भीतर एक मर्मांतक वेदना को जगा देता है। इसी तरह स्वतंत्रता के बाद कथनी-करनी के बीच बड़े भयानक अंतराल के कारण जो दुरवस्था देश की हुई है और इस स्वतंत्र कहे जानेवाले देश में जो आदमी कई परतों में दबी गुलामी भुगत रहा है, इससे 'जनता' नाम की चीज विचलित हो उठी है।''[52] यहाँ स्पष्ट है कि संत्रास यह मन की एक कठिन अवस्था है व्यक्ति के अंदर होती है। न चाहते हुए भी गलत काम करना पड़ा तो उसे संत्रास कहा जा सकता है।

आज का युवक शिक्षित होते हुए भी दिशाहीनता के कारण किसी गलत नेता के पाँव पकड़ता है। उसकी लाथ, घूसे खाता है। 'घंटा' कहानी में कथानायक 'मैं' कुंदन सरकार नेता का 'घंटा' है और उसकी दिन-रात सेवा करता है। फिर भी अलग-अलग तरह से नेता नायक का शोषण करता है। तो भी नायक उसका कुछ बिगाड़ता नहीं।

मध्यवर्गीय परिवार में बेटा बड़ा होने पर वह न अपने पिता से प्यार से बात कर सकता है न आपनी माँ को प्यार से अलिंगन दे सकता है। 'शेष होते हुए' का कथानायक मझला छुट्टियों में घर आता है तो उसे माँ से मिलने की उत्कट इच्छा होती है लेकिन वह नहीं मिल सकता। वह कहता है - ''उसके मध्यवर्गीय संस्कार जवान बेटे को छाती पर भींच कर प्यार नहीं करने देंगे।''[53] वह न अपने भाई से बोल सकता है न भाभी से बात कर सकता है। हर समय उसके मन में एक भय रहता है। इन कहानियों के विषय में प्रल्हाद अग्रवाल कहते हैं - ''संत्रास की इन स्थितियों को भारतीय जीवन के परिप्रेक्ष्य में उतारी गई श्रेष्ठ कहानियों में ज्ञानरंजन की 'घंटा', 'शेष होते हुए' उल्लेखनीय हैं। इनमें संत्रस्त भारतीय जीवन के ग्राहय चित्र हैं। इन कहानियों में इस पराभव से उबर पाने की बेचैनी भी है जो इन्हें सार्थक और जनवादी बनाता है।''[54]

परिवार का कोई व्यक्ति आत्महत्या करने जा रहा है और दूसरा उसे सिर्फ देखता रहता है। उसे लगता है उसका मर जाना ही ठीक है यह अत्यंत नकली स्थिति लगती है लेकिन जिसने यह विवशता भोगी वह आदमी यही सच मानेगा। 'संबंध' कहानी में कथानायक का छोटा भाई नौकरी न मिलने से त्रस्त होकर आत्महत्या करने के लिए जाता है फिर भी बड़ा भाई चूप रहता है। यह अत्यंत निष्ठूर स्थिति लगती है। बड़े भाई को मालूम है उसने दर-दर की ठोकरे खाई हैं इस कारण उसने ऐसा जीवन जीने के बजाय मरना ही ठीक समझा है।

व्यक्ति भले ही जीवन में कितना ही असफल क्यों न हो वह मरना नहीं चाहता। उसकी जीने की इच्छा उसे मरने नहीं देती। 'आत्महत्या' कहानी का नायक कैन्सरग्रस्त, असफल प्रेमी है इस कारण वह आत्महत्या करने का प्रयास करता है किंतु नहीं करता। प्रल्हाद अग्रवाल कहते हैं - ''इस जीवन की उमस विवशता से पलायन करता हुआ आदमी मृत्यु की अपनी नियति के रूप में स्वीकारता हुआ प्रतिष्ठित नहीं हो सकता। वह जीवन से भागता जरूर है पर जीवन से उसे मोह है वह उसे जीने लायक समझता है। जीने की उत्कट आकांक्षा भी है किंतु उसे मजबूर किया जाता है। निर्वासन चुनने के लिए। तब जीवन के नहीं इस तंत्र के प्रति उसका आक्रोश फूट पड़ता है, गहरा और निर्मम आक्रोश।''[55]

उपर्युक्त विवेचन से ध्यान में आता है कि आधुनिक युग में परिवार में मध्यवर्गीय संस्कार, आर्थिक समस्या, या जीने की इच्छा आदि कारणों से संत्रास भरा जीवन दिखाई देता है।

## 4.10. घुटन -

आज व्यक्ति-व्यक्ति से ड़र रहा है। उसे जो कहना है वह कह नहीं सकता। कभी-कभी सामने गलत बात हो रही होती है लेकिन विवशतावश या विषम परिस्थितियों के कारण उस गऊत पर रोक नहीं लगा सकते और सिर्फ अंदर-ही-अंदर घुटते रहते हैं। आज के युग में तो यह समस्या बढ़ती हुई दिखाई देती है। घुटन से व्यक्ति की मानसिक स्थिति बिगड़ जाती है और व्यक्ति दिशाहीन हो जाता है। ज्ञानरंजन की 'कलह' कहानी में स्वाति का पूरा जीवन ही घुटन से बीत रहा है। वह न अपने पिता की गलती को पकड़ सकती है और न माता को बता सकती है। वह कहती है - "तुम सब एक षड़यंत्र हमारे विरूद्ध कर रहे हो। लेकिन मुझे क्या ? मुझे इस घर से क्या लेना देना ?"[56] यह सब मन के अंदर कहती है।

'शेष होते हुए' कहानी में कथानायक मझले के परिवार में सिर्फ घुटन ही घुटन है। हर सदस्य के अंदर एक बात है पर कह नहीं सकते। मझले के आने की किसी को खबर नहीं होती है। माता-पिता उसे बोल नहीं सकते, परिवार में हमेशा एक तनावपूर्ण वातावरण है। पिता-पुत्री तारा के व्यवहार से तंग आते हैं पर कुछ कह नहीं सकते। बड़ा भाई अलग मकान बनवाता है लेकिन चुपचाप बनवा रहा है।

'चुप्पियाँ' कहानी में घुटन से भरा प्रेम है। करन और मिन्नो दोनों एक-दूसरे से प्रेम करते हैं लेकिन अंत तक बोल नहीं सकते। यह उनके मध्यवर्गीय संस्कार या उनका अज्ञान हो सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि घुटन से भरा जीवन अत्यंत दयनीय होत है। घुटन मनुष्य को पशु बनाती है और उसके विकास में बाँधा आती है। 'गोपनीयता' , 'अमरूद का पेड़', 'संबंध' कहानियों में घुटन का चित्रण दिखाई देता है।

## 4.11. अजनबीपन -

आज व्यक्ति अपने ही लोगों से दूर होता जा रहा है। उसके पास समय बहुत कम है। आज के गतिमान युग में व्यक्ति-व्यक्ति की पहचान कर लेने को समय नहीं है। यहाँ तक की महानगरों में हमारे पड़ोसी की भी जानकारी नहीं होती। आज व्यक्ति परिवार में भी अनजबी होता जा रहा है। बहुत सारे परिवार के लोग होते हुए भी अपने-आप को अकेला महसूस करनेवाले आज हमें बहुत संख्या में दिखाई देते हैं। रिश्तेदारों की

बात तो दूर की है। प्रल्हाद अग्रवाल कहते हैं - ''आज व्यक्ति अपने देश में समाज में, परिवार से, रिश्तेदारों से यहाँ तक कि अपने-आप से भी कट कर चलने के लिए बाध्य है।''[57]

आज परिवार के किसी सदस्य का होना या न होना ही बेमानी हो गया है। वह मृत्यु का भी तटस्थ दर्शक मात्र रह जाता है। अपने किसी आत्मीय की मृत्यु की आशंका या मृत्यु पर दु:ख करना भी उसे लचर लगता है। वह यह समझ चुका है कि इस तरह वह मात्र अपने आपको ही झूठी तसल्ली देने के अलावा और कुछ नहीं करता। मात्र आँसू बटाने से किसी अन्य की तकलीफों को वह कम नहीं कर सकता। यह समझकर 'संबंध' का कथानायक 'मैं' का छोटा भाई आत्महत्या करने गया है फिर भी चुपचाप बैठा है। यहाँ प्रल्हाद अग्रवाल का कहना दृष्टव्य होगा - ''ज्ञानरंजन की 'संबंध' का 'मैं' 'कफन' के घीसू और माधव की भांति ठंड़ा है। दोनों जगह परिस्थितियाँ भिन्न-भिन्न हैं किंतु इस तरह का निठाल ठंड़ापन दोनों ही कहानियों में सामाजिक विसंगतियों, निर्ममता और परिवेश की कटुता की ही देन है। पति-पत्नी, पिता-पुत्र, भाई-बहन आदि के संबंध परंपरागत रूप में नहीं निभाए जा सकते। यहाँ एक बात काबिले गौर है कि वह व्यक्ति ही अपने माँ-बाप, भाई-बहन आदि से जुदा नहीं होता वे भी उससे अलग होना चाहते हैं और एक स्तर पर है भी।''[58] यह अजनबीपन परिस्थितियों के कारण निर्माण हो रहा है। कथानायक कहता है - ''यह कितना अविश्वसनीय है कि दिन-भर के बाद लौटकर ज्यों ही मैंने अपने घर की इमारत देखी मैं हताश हो गया। शायद मैं गाफिल था और सनक में मुझे यह अंदाज नहीं हुआ कि चलते हुए मैं अपने घर की तरफ जा रहा हूँ। मैंने अपने घर की तरफ फिर देखा और कल्पना करिए इस भयानकता की कि मैं सोचता रहा यह एक बिल्डिंग है और उसके अंदर मुझे जाना है।''[59] अंतिम वाक्य से स्पष्ट है कि अपना घर ही उसे पराया लग रहा था।

'शेष होते हुए' कहानी के कथानायक को घर कृत्रिम सेट लगता है - ''मझले को अपना घर एक कृत्रिम सेट सरीखा लग रहा है। जैसे वह किसी नकली जगह के सामने व्यर्थ खड़ा हुआ है। इसलिए कि सेट का काम पूरा हो चुका, अब वह केवल नष्ट हो जाने के लिए ही बचा है।''[60] यह जो परायापन उसे लग रहा है यह मानसिकता परिवार में अशांति के कारण आती है। मझला परिवार में होते हुए भी सदस्यों के साथ अजनबी था कोई उसे बोलता नहीं था। कहानीकार कहता है - ''पुरातन शिलालेखों के समक्ष, उसकी लिपि से अज्ञान दर्शक की जो स्थिति होती है वैसी ही मझले की अपने घर के लोगों में हो गई है।''[61]

'कलह' कहानी की नायिका स्वाति भी अपने माता-पिता से अजनबी है वह कहती है - "गेस्ट-हाऊस में एक पुरूष है। वह उसका बाप है। एक औरत है लेकिन माँ नहीं है वह और वहाँ कोई नहीं। स्वाति को भय लग रहा है कि आसपास वह अकेली है।"[62] स्वाति माता-पिता होकर भी अकेली है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि आज परिवार में सदस्यों का होना भी न होने जैसा है। हर कोई एक-दूसरे से अजनबी होता जा रहा है। कभी परिस्थितियों के कारण तो कभी व्यक्तिवाद की भावना के कारण हो रहा है। रिश्तेदार की ही बात नहीं तो माता-पिता से भी बच्चे अजनबी होते दिखाई देते हैं।

## 4.12. व्यक्तिवाद -

व्यक्तिवाद की भावना आज हर व्यक्ति के अंदर पनप रही है। व्यक्ति हर समय अपना ही देखता है सबसे अलग रहने की कोशिश हमेशा करता है। ज्ञानरंजन की 'शेष होते हुए' कहानी में परिवार के सभी सदस्य माता-पिता से अलग होकर जी रहे हैं। परिवार की हर चीज आपस में बाँट लेते हैं उसमें माता-पिता का विचार नहीं होता। कथानायक मझला कहता है - "माँ-पिता के कमरे में कुछ नहीं है। उनके लिए किसी को फुरसत नहीं। स्वयं उन लोगों को भी अपने लिए कुछ आवश्यक लगता है पता नहीं। पिता द्वारा लाई जाने वाली या उनके नाम पर आनेवाली चीजें भैया-भाभी, टीनू और तारा के बीच बँट जाती है।"[63]

'यात्रा' कहानी का कथानायक सैनिक है और अपने पिता की मृत्यु होने पर गाँव जा रहा है। उसे रेल यात्रा में पिता के मृत्यु की याद से अधिक पत्नी की याद आती है। वह कहता है - "कौमुदी को कुछ होना नहीं चाहिए, मुश्किल से वह एक वर्ष पुरानी दुल्हन है।"[64]

यहाँ स्पष्ट है कि व्यक्ति के अंदर एक भावना होती है जो भी हो सिर्फ हमें ही मिले। दूसरों का विचार इसमें गौण होता है। तो कभी स्थितियों ने उन्हें ऐसा बना दिया होता है।

## 4.13. गुंड़ागर्दी -

महानगरीय जीवन में हत्या, गुंड़ागर्दी, लुटमार सर्वसाधारण हो गई है। आज गुंड़ागर्दी एक पेशा बन गया है और समाज में प्रतिष्ठा का साधन बनता जा रहा है। दिन दहाड़े रास्तों पर कोई किसी का खून करता है

तो कोई किसी को लुटता है। दिन में ईश्वर जैसे दिखाई देनेवाले रातों को लुटमारी करते हैं। मंदिर जैसे लगनेवाले घर रात को शराब के अड्डे होते हैं।

'अनुभव' कहानी में कथानायक रात के समय रास्तें से घर जाते समय सामने से मोईत्रा नाम का गुंड़ा जीप लेकर आता है और सहजता से कहता है - ''मर्ड़र कर के आ रहा हूँ। फतेहपुर में एक को जीप से चाक कर दिया। बहुत दिन से परेशान कर रहा था, बेरी..... ने।''[65] यहाँ स्पष्ट है कि वह गुंड़ा उसी तरह बता रहा है जैसे कोई साधारण सा काम करके आया है। ज्ञानरंजन की एक ही कहानी में इसका चित्रण दिखाई देता है।

## 4.14. मध्यवर्गीय जीवन की विड़ंबना -

समाज में उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग दिखाई देते हैं। उच्चवर्ग साधन-सुविधाओं से भरा-पूरा होता है इस कारण उनके सामने अधिक समस्याएँ नहीं होती। निम्नवर्गीय लोगों को अधिक समस्याएँ नहीं होती क्योंकि उनकी आशाएँ सीमित होती हैं। वे साधन-सुविधाएँ जुटाने के पीछे नहीं पड़ते। उच्चवर्ग और निम्नवर्ग के बीच जो मध्यवर्ग होता है उनका जीवन हमेशा संघर्ष से भरा रहता है। उन्हें हर पल कमाने की आशा होती है। वह न जीता है न मरता है। मध्यवर्गीय व्यक्ति के पास पात्रता होकर भी सही जगह पर नहीं जा सकता। उसके पास शक्ति होती है, बुद्धि होती है लेकिन परिस्थितियों ने उन्हें बाँधकर रखा होता है। विवेच्य कहानीकार ने अपनी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन का चित्रण किया है। इसका मतलब यह नहीं की बाकी वर्गों का किया नहीं लेकिन प्रमुखता से उन्होंने मध्यवर्ग को स्थान दिया है। मध्यवर्गीय जिंदगी का दु:ख, हताशा, जिजीविषा, असफलता, शोषण आदि का चित्रण ज्ञानरंजन की हर कहानी इसकी साक्षी है। डॉ. प्रभा खरे कहती है - ''ज्ञानरंजन ही एकमात्र ऐसे कहानीकार हैं जो 'उंदरभरी' मध्यवर्ग की नसनस पहचानते हैं। 'किंचित आघात' देती हुई उनकी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन का खोखलापन, उसकी अस्थिर मानसिकता, विसंगतियाँ, विद्रुपताओं की गहरी पहचान मौजूद है। निजत्व का आभास देती हुई इन कहानियों में सार्वजनिक सच्चाई अंतर्व्याप्त है।''[66] यहाँ स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन मध्यवर्गीय जीवन का चित्रण करनेवाले कहानीकार हैं।

मध्यवर्गीय व्यक्ति की स्थिति सबसे अधिक दयनीय है। उसे हर कदम पर जीवन से समझौता करना पड़ता है क्योंकि सड़ी-गली परंपराओं और रूढ़ियों की आड़ में वह अपनी तथाकथित इज्जत के मोह से

जकड़ा हुआ है वह पलायन करना चाहता है, जिंदगी से भाग जाना चाहता है, किंतु वह भी नहीं कर सकता। उसे नपुसकता वरन करनी पड़ी है। वह जीवन से छल करता है, अपने सुहृदयों से छल करता है। यहाँ तक कि अपने-आप से भी छल करता है। इसी कारण वह आसानी से खरीदा जा सकता है। अपने ही लोगों के शोषण के लिए उसे मोहरा बनाया जा सकता है किंतु उसके अंदर की मानवता भी सदैव छटपटाती रहती है, इस कटुता से उबरने के लिए। वह सभ्यता का झूठा लबादा उतारकर फेंक देना चाहता है पर उसे ओढे रहने की निरर्थक गरिमा को त्यागने का साहस भी उसमें नहीं है। यह आवरण उसे आर्थिक संकट की चक्की में पीसे डाल रहा है। नैतिकता, आस्था, आदर्श जैसे खोखले शब्दों के मायाजाल में उसके लिए यह पहचान भी मुश्किल हो गई है कि वह जिस डाल पर बैठा है उसी को काट रहा है। प्रल्हाद अग्रवाल लिखते हैं - "उसे जीवन को बोझ समझकर उठाना होता है। एक क्षण का सार्थक जीवन पाने के लिए उसे सौ बार मृत्यु को वरण् करना होता है। बाहर खोई हुई जिजीविषा को वह अपने अंतर्मन की दोहरी-तिहरी पर्तों में खोजता है। कभी वह चिल्ला-चिल्लाकर अपना आक्रोश व्यक्त करना चाहता है और कहीं वह एकदम ठंड़ा पड़ जाता है।"[67]

मध्यवर्ग की जिंदगी पर बहुतेरे कहानीकारों ने कलम चलाई है किंतु उसके एक-एक तेवर की इतनी सटीक पहचान उसकी बनती बिगड़ती आकृति का इतना पारदर्शी बोध, उसकी दयनीयता और कमीनेपन की इतनी तल्ख अनुभूति , मूल्यों में टकराव की इतनी अंतरंग अनुभूति तथा अभिव्यक्ति, संस्कार और विवेक के बीच होनेवाली कशामकश का इतना तीखा अहसास, उसके खोखले अहं दिखावटी और बनावटीपन इतनी खरी टिप्पणियाँ कम ही मिलेंगी जितनी ज्ञानरंजन की कहानियों में हैं। मध्यवर्ग की जिंदगी के छद्म उसकी कुरूपता, उसकी मौकापरस्ती, उसके ढुलमुलपन उसकी जुगुप्साजन्य बीभत्सा और अश्लीलता में ज्ञानरंजन गहरे पैठे हैं। इस वर्ग की जिंदगी की कोई भी दरार उन्होंने अनदेखी नहीं छोड़ी है और यह सब उन्होंने एक रचनाकार की अद्भुत तटस्थता और विस्संगता से किया है। एक सर्जन की तरह उन्होंने इस वर्ग की जिंदगी के हर सड़े-गले अंश पर चीते लगाए हैं, उससे उपजी गंदगी का साक्षात्कार किया है, अपने मानवीय रूख तथा मानवीय सदाशयता को बरकरार रखते हुए। यह उनकी मानवीय संवेदना तथा प्रगतिशील सोच ही है जो सतह पर न उतरते हुए भी दलदल तथा कीचड़ के बीच भी पाक-साफ रख सकी है। अपने रूख में, अपनी संवेदना में, वे कहीं भी अमानवीय नहीं हुए हैं। जहाँ उनके कथानायक और नायिकाएँ स्थितियों तथा परिवेश के चलते अश्लील और अवांछनीय हुए हैं

वहाँ भी रचनाकार का मानवीय रूख बरकरार रहा है उपर्युक्त विवेचन का समर्थन ज्ञानरंजन की 'शेष होते हुए', 'संबंध', 'गोपनीयता', 'सीमाएँ', 'चुप्पियाँ', 'आत्महत्या', 'फेंस के इधर और उधर' आदि कहानियाँ करती हैं।

ज्ञानरंजन की 'दिवास्वप्नी' कहानी का कथानायक इंदो अपनी पुरानी प्रेमिका मीरा से मिलने पंचमढ़ी स्थान पर जाता है लेकिन मीरा मिलने से पहले पैसे अधिक खर्च नहीं करता, अधिक मँहगी चीजें नहीं खरीद सकता क्योंकि आगे चलकर उसे अपनी प्रेमिका मीरा के लिए पैसे खर्च करके उसे खुश करना है। कहानीकार एक जगह लिखता है - ''अभी इस चिठ्ठी को छोड़कर उसे जल्दी ही किसी ऐसे भोजनालय की तलाश करनी है, जहाँ कम पैसे में अच्छा खाना मिल जाए।''[68] यहाँ आर्थिक समस्या दिखाई देती है।

'कलह' कहानी में स्वाति के माता-पिता हमेशा रात को झगड़ा खेलते हैं क्योंकि उन्हें ड़र है कि दिन में झगड़ा खेलने से समाज में प्रतिष्ठा कम होगी। जो बहुत ही दयनीय लगता है। 'फेंस के इधर और उधर' कहानी में पुरानी परंपरा का परिवार व्यर्थ ही आधुनिक विचारधारा के परिवार की चर्चा करता है। किसी काम में असफलता मिलने पर अपने-आप को समाप्त करने की प्रवृत्ति व्यक्ति में होती है लेकिन जीने की इच्छा उसे मरने नहीं देती। यही मध्यवर्गीय जीवन की जिजीविषा ज्ञानरंजन ने 'आत्महत्या' कहानी में चित्रित की है। हर वक्त सबसे अलग दिखाने की प्रवृत्ति मध्यवर्ग में होती है। इस कारण वह सर्वसामान्य से अलग कुछ करने जाते हैं जो बड़ा ही हास्यास्पद बनता है। इसका चित्रण 'एक नमूना सार्थक दिन' कहानी में ज्ञानरंजन ने दिखाया है। 'मृत्यु' कहानी में कथानायक 'मैं' और दोस्त समाबहादुर मध्यवर्गीय हैं जो जीवन के अंत तक संघर्ष करते रहे लेकिन सफलता नहीं पा सके हर वक्त अपमान और अपयश हाथ में मिला है। यही उनके जीवन की व्यथा है।

'क्षणजीवी' कहानी का कथानायक 30 रूपए की मनिऑर्डर के लिए अपने पिता को गालियाँ देता है। रास्तें में पुरानी सहेली शांति मिलती है तो उसकी बच्ची के हाथ में कुछ पैसे देना चाहता है लेकिन दे भी नहीं सकता। यह उसके जीवन का दु:ख है। वह कहता है - ''सोचता हूँ खाना कहाँ खाऊँगा। भोजनालय वाला आज तो बिना रूपये लिए खिलाने से रहा।''[69] यहीं नायक विवश होकर अपनी बहन को गालियाँ देता है कि वह किसी भी लड़के से प्यार क्यों नहीं करती। वह अपनी बहन की शादी करने में असमर्थ है क्योंकि उसके पास इतने पैसे नहीं हैं।

'सीमाएँ' कहानी में मध्यवर्गीय संकुचित विचार का चित्रण दिखाई देता है। विवेक अपने दोस्त की बहन प्रमिला से प्यार करता है लेकिन अपनी बहन सविता ने किसी के साथ प्यार करना उसे पसंद नहीं है। 'दिलचस्पी' कहानी में मध्यवर्ग की दिखावेपन की भावना को दिखाने का प्रयास किया है। कथानायक मुकुल पहाड़ पर नौकरी करता है तो उसकी माता गाँव के सभी लोगों को बढ़ा-चढ़ाकर बता देती है। 'चुप्पियाँ' असफल प्रेम कहानी है। आज शहर में खुले आम प्रेम करनेवाले दिखाई देते हैं लेकिन आज भी गाँव में प्रेम कम मात्रा में दिखाई देता है। उनके मन में समाज का ड़र होता है इस कारण बोल नहीं पाते। कथानायक करन मिन्नो से प्यार करता और मिन्नो भी उसे चाहती है लेकिन दोनों करन के फूफा-फूफी से ड़रते हैं और अंत तक बोल भी नहीं सकते यह उनका मध्यवर्गीय संस्कार है। 'याद और याद' कहानी के कथानायक के जीवन में पहले बहुत गहमागहमी थी अनेक लीलाएँ उसने की लेकिन आज वह खदान कामगार बन गया है। वह सिर्फ पुरानी यादे याद करके जीवन जी रहा है। मध्यवर्ग में एक बात दिखाई देती है कि व्यर्थ ही बच्चों से कई बाते छीपाई जाती हैं। किंतु जीतनी बातें छुपाते हैं उतनी बच्चों के मन में उत्कंठा बढ़ती है। 'गोपनीयता' कहानी में कथानायक के परिवार में गर्भपात की घटना घटित हुई यह परिवार के बड़े लोग बच्चों से छुपाते हैं क्योंकि उन्हें ड़र है यह बात समाज को समझने पर समाज उन्हें हीन समझेगा। लेकिन इस कारण उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा है। वे जीतने ही आगे भागते हैं समस्याएँ उनके पीछे भागती हैं।

'यात्रा' कहानी के कथानायक को अपने पिता की मृत्यु होने पर गाँव जाते समय ऑफिस में पिता की मृत्यु का कारण बताना अपमान जनक लग रहा है और बहन का ब्याह तय हो गया है यह झूठा कारण बता देता है। उसका मध्यवर्गीय संस्कार है कि सच्चाई उन्हें बताने से अपनी प्रतिष्ठा कम होगी यह उसकी खोखली प्रतिष्ठा है।

'घंटा' कहानी में उन मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों पर व्यंग्य किया है जो अपने पास शक्ति होते हुए भी किसी नेता के पीछे पड़कर उनके पाँव पर गिड़गिड़ाते हैं। व्यर्थ ही उनकी चापलुसी करते हैं। कथानायक कुंदन का चेला बनता है, उसकी मार खाता है, उसके साथ शराब भी पीता है। यह सब वह परिस्थितियों के कारण करता है।

मध्यवर्गीय हमेशा कुछ पाने के पिछे लगा हुआ रहता है। उसे दूसरों की प्रगति देखकर इर्शा तो नहीं होती लेकिन उसी प्रकार कमाने की आशा मन में उत्पन्न होती है। यह किसी भी मार्ग से, जैसा भी त्याग करना हो, वह पाने की असीम लालसा लेकर वह काम करता है। 'बहिर्गमन' कहानी का मनोहर अपना समाज सुधारने की इच्छा रखता है लेकिन पुरानी पीढ़ी का समाज उसकी बातों की ओर ध्यान नहीं देता। वे अपना कस्बा छोड़ने को तैयार नहीं होते। वहीं मनोहर दिल्ली जाकर गैर काम में लग जाता है। सोमदत्त नामक दलाल का दोस्त बनकर अपने सुखी परिवार को छोड़कर परदेस जाता है। यहाँ दिखाई देता है कि अधिक कमाने की आशा के कारण यह सब कुछ हो गया है। मध्यवर्गीय जीवन के विषय में वेदप्रकाश अमिताभ लिखते हैं - ''साठोत्तरी कहानियों में मध्यवर्ग के दिवास्वप्नों और महत्त्वाकांक्षाओं का उल्लेख है, दूसरी और उनकी भग्नाशाओं और विशेषताओं का चित्रण है।[70]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर ध्यान में आता है कि मध्यवर्गीय जीवन की यह विड़ंबना कभी परिस्थितियों के कारण बिगड़ गई है, तो कभी उनके दिखावेपन, अहंभाव के कारण निर्माण हो गई है। रामदरश मिश्र कहते हैं - ''मध्यवर्ग इन कहानियों के केंद्र में रहा है। इन कहानियों में समग्र भाव से मानव पीड़ा व्यक्त हुई है कहीं यह पीड़ा भारत-विभाजन के कारण जन्मी है, कहीं अकाल से जन्मी है, कहीं युद्ध से जन्मी है, कभी राजनीतिक दोगलेपन से कहीं अफसरशाही से, कहीं पूँजीवादी व्यवस्था से, कहीं महामारी जिंदगी की यांत्रिकता, अकेलेपन और संत्रास से।''[71] मध्यवर्गीय जीवन के दु:ख, विद्रुपता, संघर्ष, घुटन निराशा आदि का चित्रण प्रमुखत: से किया है। साथ ही उन्होंने मध्यवर्गीय जीवन में विद्रोह भी दिखाया है कि शोषक का विरोध करता हुआ दिखाई देता है। तारादत्त उपाध्याय लिखते हैं - ''साठोत्तरी कहानी में निराशा, कुंठा, मुमूर्ष, जिजीविषा, परिवेश की विसंगति एवं स्वप्न-भंग की दशा भी रूपायित हुई है जो कि अद्यतन समाज की विसंगतियों एवं विड़ंबनाओं की देन है।''[72]

ज्ञानरंजन ने जो देखा, जो भोगा, जो सुना है वही उनकी कहानियों का विषय है। उनकी हर कहानी में मध्यवर्गीय जीवन की विकृतियाँ और गुण-दोषों को दिखाया है। तारादत्त उपाध्याय लिखते हैं - ''साठोत्तरी कथाकार ने जो देखा, सहा, जिया और अनुभव किया उसकी निर्मल निश्चल अभिव्यक्ति उसने की और ऐसा करने में उसे कोई अड़चन भी नहीं हुई। घटना जितनी तीखी और कटु थी, उसने वैसे ही उसे

अभिव्यक्त भी किया बेहिचक। साठोत्तरी कहानीकार ने वह रोमानी केंचुल निर्ममता से चीर कर उतार दी है जो नई कहानी के साँप ओढ़ रखी थी।''[73]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट है कि ज्ञानरंजन की कहानियों में मध्यवर्गीय जिंदगी में विडंबना और समसयाएँ कभी आर्थिक समस्या, कभी असफलता, संकुचित विचार, असफल प्रेम, संयुक्त परिवार, तो कभी विषम परिस्थितियों के कारण और खोखली प्रतिष्ठा अधिक कमाने की भावना आदि कारणों से मध्यवर्गीय जीवन में अनेक समस्याएँ निर्माण हो गई हैं।

## 4.15. अंधश्रद्धा -

अंधश्रद्धा भारतीय समाज को मिला एक शाप है। अंधश्रद्धा माननेवाले पलायनवादी होते हैं। अंधश्रद्धा व्यक्ति विकास को रोकती है। अंधश्रद्धा के कारण परिवार में अनेक समस्याएँ निर्माण होती हैं। इसका चित्रण ज्ञानरंजन की 'अमरूद का पेड़', 'मृत्यु', 'शेष होते हुए', 'आत्महत्या' कहानियों में दिखाई देता है। विश्वनाथ प्रसाद तिवारी लिखते हैं - ''भारतीय मध्यवर्गीय परिवार अनेक प्रकार की रूढ़ियों और रूमानी कल्पनाओं के पुँजी हैं। ज्ञान अपनी कहानियों में इनका विरोध करते हैं।''[74] ज्ञानरंजन ने अंधश्रद्धा की पुष्टि नहीं की तो उस पर व्यंग्य किया है।

'आत्महत्या' कहानी का कथानायक 'मैं' का ज्योतिष पर विश्वास है। जब वह आत्महत्या करने का विचार करता है तो उसे तुरंत याद आता है - ''एक बहुत बड़े हस्त-रेखा विशेषज्ञ ने मैग्नीफांग ग्लास से उसकी दाहिनी-बायी हाथेली को देखा-परखा और पूछा था कि क्यूँ साहब, आप अकसर आत्महत्या की बात क्यों सोचा करते हैं ? आप बहुत निराशावादी हैं।''[75] चूल्हे की राख से यक्ष्मा बिमारी होने का ड़र 'शेष होते हुए' का मझला मानता है। कहानीकार चित्रण करता है - ''चूल्हे की राख की तरफ मझले का ध्यान चल गया। तपी हुई राख बसा रही है। गर्म राख सूँघते रहने से यक्ष्मा हो जाने का भय बना रहता है। मझले को पता नहीं किसने बताया था।.... लेकिन अंधविश्वास की प्रबलता और भय उस पर छाया रहा।''[76] भूत, प्रेत, ताबीज पर विश्वास करनेवाला 'मृत्यु' कहानी का समाबहादुर है। उसके गले में एक ताबीज था जो उसकी शादी पर दादी ने पहनवाया था। उसकी धारणा थी कि यह ताबीज पहनने से समाबहादुर का वैवाहिक जीवन सुख और समृद्धि से बीत

जाएगा। कहानीकार लिखता है - "वह ताबीज मसी सिंह आचार्य ने बनाया था जो उसके नामी ग्रामी भगवान थे। ज्योतिषी भगवान ही होता है। दादी कहती थी कि इस ताबीज को पहन लेने से सामबहादुर को शादी के दिन बहुत अच्छे रहेंगे। कोई भूत प्रेत नहीं सता सकेगा।"[77] लेकिन शादी के बाद खेत के कर्ज के कारण नेपाल से भागकर भारत आया, वहाँ सैनिक भरती हो गया वहीं से भागा और अंत में पेट की भूख मिटाने ताबीज बेच दिया और पहनने के लिए वस्त्र न मिलने के कारण वह मर जाता है।

भारतीय समाज में अमरूद के पेड़ को अशुभ माननेवाले लोग हैं। 'अमरूद का पेड़' कहानी में कथानायक के घर के सामने अमरूद का पेड़ है जो अपने आप ही उग आया है लेकिन पड़ोसिन बाबू कन्हैयालाल की बूढ़ी पत्नी कहती है - "पश्चिम की तरफ अगर मकान का मुखड़ा हो और सामने ही अमरूद का पेड़ हो तो राम-राम बड़ा अशुभ होता है।"[78] नायक के पिता भी अंधविश्वास से ग्रस्त है। वह हमेशा नायक को पत्र में लिखते हैं - "माँ के बाएँ फेफड़े में जो धब्बा था वह पुन: उभर आया है। यह सब किसी अशुभ नक्षत्र का दुष्परिणाम है।"[79] नायक की माँ तो परिवार के सभी दुष्परिणाम का कारण अमरूद के पेड़ को मानती है। नायक कहता है - "माँ का मन यह मान बैठा था कि बड़ी बहू की अलगाव भावना, सबसे छोटे का निठ्ठलापन, खुद उनकी बीमारी और लोगों का धंदे से बिखर जाना और कुछ नहीं है बहुत दिनों तक दरवाजों पर उसी अमरूद के पेड़ के रहने का दुष्परिणाम है जिसे काफी पहले ही लोगों ने अशुभ बताया था।"[80]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि ज्ञानरंजन ने अंधश्रद्धा पर विश्वास करनेवाले लोगों पर व्यंग्य किया है। उनका निठ्ठलापन, अज्ञान सामने लाने का प्रयास किया है। ज्ञानरंजन की कहानियों में अंधश्रद्धा माननेवाले पात्र सभी शिक्षित हैं फिर अज्ञान के कारण अंधविश्वास रखते हैं।

## 4.16. राजनेताओं द्वारा सामाजिक शोषण एवं अनाचार -

भारत देश में आजादी के बाद परदेसी शोषक गए और देशी शोषक निर्माण हो गए। रक्षक ही भक्षक बन गए। जनता का सपना था आजादी मिलने पर देश में शांति होगी सभी ओर सुख ही सुख होगा लेकिन जनता का सपना, सपना ही रह गया और चुनाव जीतने के लिए पक्ष-विपक्ष निर्माण हो गए। सिर्फ चुनाव के समय जनता के सामने ओट की भीख माँगना और बाद में उनका ही शोषण करना चलता रहा। आज शिक्षित युवकों को

दिशाहीन बनाते हैं। बुद्धिजीवी भी विवशतावश उनके पीछे लगते हैं। ज्ञानरंजन की 'घंटा' देश विषयक कहानी हैं। सत्यप्रकाश मिश्र कहते हैं - '' 'घंटा' और 'बहिर्गमन' अवश्य ऐसी कहानियाँ हैं जिनका सेट परिवार न होकर देश हो गया है। यानी इन कहानियों में परिधि विस्तृत है जिसमें स्वातंत्र्योत्तर भारत की सभ्यता का संकेत है। इनमें कुछ राजनैतिक चाशनी भी है और एक विशेष प्रकार के निम्न मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी तथा सर्वहारा अभिजात्य के चरित्र का संकेत किया गया है। निश्चिय ही इस प्रकार के आचरण के प्रति घोर वितृष्णता का संकेत इन कहानियों में है।''[81]

ज्ञानरंजन की 'घंटा' कहानी में कुंदन सरकार नामक नेता बुद्धिजीवियों का शोषण करता है। कथानायक 'मैं' शिक्षित है लेकिन विद्वत्ता की उल्टी-सीधी दो चार बातें 'मैं' को बताकर कुंदन कथानायक को अपना चेला बनाता है और कथानायक का विविध प्रकार से शोषण करता है। नायक को शराब पिलाता है, दिन भर पैदल चलाता है, चाय की सिवा और कुछ नहीं देता, माँग-माँग कर बीड़ी पीता है जबकि उसी वक्त जेब में बहुमूल्य विदेशी सिगरेट रखी हुई होती है। उपर-उपर से गरीबी का आवरण धारण करता है और कहता है - ''तुम देखो मैं स्कॉच पी सकता हूँ फिर भी ठर्रा क्यों पीता हूँ, बीड़ी क्यों पीता हूँ, सड़कों पर पैदल क्यों भटकता हूँ, बोरा खादी क्यों पहनता हूँ, गाड़ी होते हुए भी पैदल क्यों चलता हूँ, जबकि मैं लेखक नहीं हूँ - बस बुद्धिजीवी हूँ। असली बात यह है कि मुझे सच्चाई खुबसूरत लगती है और सत्य इकठ्ठा कर रहा हूँ।''[82] यह सब उसकी चाल है कि अपने विषय में कथानायक 'मैं' के मन में अच्छी भावना पैदा करना। जब क्रोध में आकर 'मैं' उसे गालियाँ देता है तो उसकी गुंडों द्वारा पिटाई करवाता है। शिक्षितों का शोषण करना उनकों दिशाहीन बनाना उनका काम है।

इस प्रकार ज्ञानरंजन की राजनीति पर एक ही कहानी लिखी है। यहाँ कथानायक 'मैं' उन सभी शिक्षितों का प्रतीक है जो नेता के पीछे भागते हैं। नेता लोग सिर्फ सत्ता और प्रतिष्ठा के लिए जनता का शोषण करते हैं। उन्हें डर है कि आगे चलकर शिक्षित युवक उनके विरूद्ध आवाज उठा सकते हैं इस कारण उन्हें गलत रास्तें पर जल्दी लगाने का प्रयास करते हैं।

## 4.17. आर्थिक संघर्ष -

आज का समाज अर्थ केंद्रित है। अर्थ को जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। अर्थ के आधारपर ही व्यक्ति जीवन जीता है। समुचे देश में बढ़ती हुई जनसंस्था के साथ बढ़ती हुई बेकारी, हर सही पद पर कुछ संपन्न लोगों और परिवारों के गलत अधिकार गरज की आय के तमाम समृद्ध साधनों से वंचित सही लोगों की भीड़ काम के न मिलने पर अकेली होती जा रही है। काम होता है तो आदमी को काम का ही साथ होता है, काम के चलते अकेला होने के बावजूद अकेलापन काटता नहीं लेकिन स्थिति यह है कि सही प्रतिभा के उपयुक्त काम न मिलने पर आदमी काम होते हुए भी अकेला हो गया है, वह जहाँ होना चाहिए वहाँ तक पहुँचने में गलत हाथों की एक छोटी मगर मजबूत कतार है और यह कतार हर पल इस आदमी को कोंधती, कुरेदती और कुंठित करती रहती है, नतीजे के तौर पर वह असंतुष्ट, पराजित और क्रुद्ध होता रहता है, स्वतंत्रता से पहले स्वातंत्र्योत्तर देश की ली गई तस्वीर के बारे में वह अब स्वप्नभंग की स्थिति से गुजर रहा है। इन विषम स्थितियों के कारण ही देश की आर्थिक स्थिति गिरती जा रही है। इन स्थितियों से जर्जर हो गई जनता का चित्रण ज्ञानरंजन की कहानियों में दिखाई देता है।

'संबंध' कहानी में कथानायक का छोटा भाई बेकार है। उसके बारे में कथानायक कहता है - ''पिछले तीन वर्षों से वह नौकरी की तलाश कर रहा है और तभी से लगातार वह एक ताकत से चिड़चिड़ा भी रहा है।''[83] यह उसकी दयनीय स्थिति देखकर कथानायक 'मैं' अपने छोटे भाई का मर जाना ठीक समझ रहा है। स्वतंत्रता पूर्व काल में देशवासियों की आर्थिक स्थिति कितनी दयनीय हो गई थी इसका चित्रण 'मृत्यु' कहानी में हुआ है। समाबहादुर के जीवन में शुरू से अंत तक आर्थिक समस्या जुड़ी हुई है। नेपाल में अपनी जमीन पर कर्ज का बोझ होने के कारण भारत भाग आया था। यहाँ आकर चाय की दुकान खोली वह भी ठीक नहीं चला और अंत में गले का ताबीच बेच देता है। इतना ही नहीं एक दिन पहनने का ओवरकोट बेच देना पड़ता है। कहानीकार कहता है - ''एक माने में उस ओवरकोट के पीछे की जिंदगी भी बिक गई।''[84] क्योंकि उसी रात को समाबहादुर की ठंड़क सहन नहीं कर पाने से मृत्यु हो जाती है।

'याद और याद' कहानी का कथानायक रोजगारी के लिए कोयले की खदान में काम करता है उसे अपना परिवार छोड़कर परदेस जाना पड़ा है। 'मनहूस बंगला' में संयुक्त परिवार है जिसमें सभी समस्याओं के

लिए छुपा झगड़ा चलता है। 'क्षणजीवी' का कथानायक आठ दिन से पिता द्वारा भेजी मनिऑर्डर का इंतजार कर रहा है। उसे अपने पिता पर क्रोध आता है। कथानायक बेकार है, चार साल हो गए हैं कहीं भी नौकरी नहीं मिली। इतना ही नहीं तो वह अपनी बहन को गालियाँ देता है क्योंकि उसके ब्याह के लिए उसके पास पैसा नहीं है। 'दाम्पत्य' कहानी का कथानायक रसगुल्ले लाने पैसों की कमी के कारण रिक्शा से नहीं जाता, पैदल जाता है। 'रचना-प्रक्रिया' का कथानायक बेकार है, वह कहता है - "मैं उम्र और देह किसी से बूढ़ा नहीं हुआ था लेकिन भाग्य कपाट के बंद रहने की वजह से खिसियाया रहता था.....। इन्हीं बेरोजगारी और निद्रा के एक रोज सरीखे मनहूस दिन मुझे कुछ हल्ला सुनाई पड़ा।"[85] शिक्षित होकर भी नौकरी न मिलने पर युवक गलत रास्तें से पैसा कमाने को विवश होते हैं। 'बहिर्गमन' कहानी में मनोहर शिक्षित है लेकिन नौकरी नहीं है इस कारण गलत काम करता है। कथानायक 'मैं' भी बेकार है। वह तो विचार करता है - "मेरी नौकरी नहीं लगी और मुझे लगा अब सड़ जाते, निर्जीव हो जाने में अधिक देर नहीं है। यह समय मेरे ऊपर कसाई के चाकू की तरह चल रहा था। मुझको लगा मैं ड़गमगा जाऊँगा।"[86]

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट है कि अर्थ मानव जीवन का केंद्र बिंदु बन गया है और व्यक्ति से अधिक पैसों को महत्त्व मिला है। शिक्षित होकर भी नौकरी न मिलने के कारण युवक गलत कदम उठाते हैं। अर्थ की समस्या के कारण भाई-भाई के बीच संघर्ष, पिता-पुत्र के रिश्तों में अंतर, व्यक्ति परिवार छोड़कर परदेस की ओर जा रहे हैं। पैसा न मिलने पर लाचारी, विवशता, आदि का सामना करना पड़ता है। कभी-कभी अर्थ की समस्या के कारण मृत्यु भी होती है, जैसे 'मृत्यु' कहानी के समाबहादुर की हो गई है।

## 4.18. पराधीनता -

साठोत्तरी कहानीकारों ने देश की पराधीनता भी देखी है। इस कारण स्वतंत्रता के पूर्व अंग्रेजों ने भारतीय जनता पर जो अन्याय अत्याचार किए उसका चित्रण सन् 60 के बाद के कई कहानीकारों ने उसे अपने साहित्य का विषय बनाया है। विवेच्य कहानीकार ज्ञानरंजन ने 'मृत्यु' कहानी में अंग्रेजों के अन्याय का जिक्र किया है जो बड़ा ही मन को हिला देने वाला है। उस समय की जनता को कितनी यातनाएँ सहन करनी पड़ी, कितना शोषण किया था इसका प्रमाण 'मृत्यु' कहानी में मिलता है। उस समय की जनता बंगला, गाड़ी, आराम,

अय्याशी आदि के सपने नहीं देखते, उन्हें दिखाई देता आजादी का सपना जो आगे चलकर साकार हुआ। जनता मजबूरी के कारण अन्याय को सहन करने के सिवा और कुछ कर नहीं सकती थी। 'कथानायक' मैं कहता है - ''सामबहादुर को अक्सर करके उस पथरीली गुमटी में एक सपना आता। उसकी दुकान के सामने से आजादी का जुलूस जा रहा है।''[87] कथानायक 'मैं' और समाबहादुर की चाय की दुकान पर अधिकारीयों के व्यवहार के विषय में कथानायक 'मैं' कहता है - ''मेरे चाय न दे सकने की लाचारी दिखाने पर उसने हाथ के रूल से मेरे गले पर जोर की चोट की। और सामबहादुर के पाँव को लड़खड़ाती ठोकर।''[88] यहाँ उनके अन्याय का दर्शन होता है। जनता उनका खुलेआम विरोध नहीं कर सकती। कथानायक क्रोध में आकर मन के अंदर कहता है - ''हिंदुस्तान को आजादी जल्दी मिलने वाली है तब देख लेंगे सालों को।''[89] यहाँ स्पष्ट है कि जनता उनका विरोध कर रही थी लेकिन अंदर-ही-अंदर।

## 4.19. सामाजिक रूढ़ि-परंपराएँ -

भारतीय समाज रूढ़ि-परंपरा पर चलनेवाला समाज है। पुराने आचार-विचार और नए आचार-विचारों में अंतर होता है। जो परिस्थिति के साथ बदलता है वही समाज विकास कर सकता है। आज के विज्ञान युग में हर क्षेत्र में प्रगति हो रही है और नई पीढ़ी अपना विकास कर रही है लेकिन पुरानी मान्यताएँ और परंपराएँ समाज में अभी भी वैसी ही दिखाई देती हैं। जो की समाज के विकास के लिए बाधक हो सकती है। ज्ञानरंजन ने अपनी 'फेंस के इधर और उधर', 'पिता' आदि कहानियों में परंपरा को लेकर चलनेवाले लोगों का पर्दाफाश किया है।

'फेंस के इधर और उधर' कहानी में एक पुरानी परंपरा को लेकर चलनेवाला परिवार और नई विचारधारा को लेकर चलनेवाला पड़ोसी परिवार है। कथानायक 'मैं' की बहन और भाभी को अकेली घर से बाहर नहीं निकलने देते। उनकी धारणा है कि बेटी ने विवाह होने से पहले हँसना नहीं चाहिए और विवाह के समय सभी गाँव के लोगों को बुलाना ही चाहिए। बहुत सारे पैसे खर्च करने चाहिए। कथानायक के पिता दुल्हन विषयक कहते हैं - ''पहले जमाने में लड़कियाँ गाँव की हद रोती थी। जो नहीं रोती उन्हें मार कर रूलाया जाता था, नहीं तो उनका जीवन ससुराल में कभी सुखी नहीं रह सकता था।''[90] जब पड़ोसी ने अपनी बेटी के विवाह के लिए इन्हें

बुलाया नहीं तो दादी कहती है - ''न रोशन चौकी, न धुमधड़ाका न तर पकवान। ऐसी कंजूसी किस काम की और फिर ऐसे मौके पर पड़ोसी को न पूछना वाह, इन्सानियत। राम-राम।''[91] पुरने आचार-विचार, परंपराएँ हैं वही उनके विकास में बाधा डालती है।

'पिता कहानी में नायक के पिता न पुत्रों के विचार सुनते न कभी पुत्रों द्वारा लाई चीजों का इस्तेमाल करते, न पुत्रों के कहने पर अच्छे कपड़े पहनते हैं न अच्छे दर्जी से सिलवा लेते। कथानायक कहता है - ''चौक से आते वक्त चार आने की जगह तीन आने और तीन आने पर तैयार होने पर, दो आने में चलने वाले रिक्शा के लिए पिता घण्टे-घण्टे खड़े रहेंगे। धीरे-धीरे सबके लिए सुविधाएँ जुटाते रहेंगे, लेकिन खूद उसमें नहीं या कम-से-कम शामिल होंगे।''[92] कभी वाश-बेसिन में मुँह हाथ धोते नहीं, शावर के नीछे स्नान नहीं करते। पिता लंबे समय से दो ही ग्रंथ पढ़ रहे हैं रामायण और गीता। यह सभी पिता के पुराने आचार-विचार पुत्रों को त्रासदायक लगते हैं इस कारण दोनों में संघर्ष है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर ध्यान में आता है कि पुरानी परंपरा को लेकर चलनेवाले न खूद प्रगति करते हैं न दूसरों को करने देते हैं।

## 4.20. विवाह -

भारतीय समाज में विवाह एक पवित्र बंधन माना जाता है। विवाहित पति-पत्नी को जिंदगी भर एक-दूसरे के साथ रहना पड़ता है। जीवन के अंत तक वे दोनों एक-दूसरे के सुख दु:ख में शामिल होते रहते हैं। समाज विवाहित स्त्री-पुरूषों को ही महत्त्व देता है। ज्ञानरंजन की 'फेंस के इधर और उधर' और 'हास्यरस' कहानियों में दो प्रकार के विवाह का चित्रण दिखाई देता है।

'फेंस के इधर और उधर' कहानी में नई विचारधारा की लड़की का विवाह आर्यसमाज की पद्धति पर आधारित हुआ है। कहीं कोई किसी से पता नहीं होता न निमंत्रण, न रिश्तेदार, न बँड़, न रोशनाई न रोना-धोना, न खान-पान। यह एक सरल विवाह का रूप दिखाई देता है। 'हास्यरस' कहानी में प्रेम विवाह का चित्रण है जिसे रजिस्ट्रर मॅरेज कहते हैं। इस विवाह में गवाही देने वालों की जरूरत होती है।

इस प्रकार ज्ञानरंजन की उपर्युक्त दो कहानियों में विवाह के दो आधुनिक प्रकार दिखाई देते हैं जो सहज और सुलभ हैं। पूरानी परंपरा की पद्धति से पैसा और समय का बहुत व्यंग्य होता है।

निष्कर्ष -

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह ध्यान में आता है कि ज्ञानरंजन ने अपनी कहानियों में मध्यवर्गीय समाज जीवन का प्रमुखता से चित्रण किया है। मध्यवर्गीय समाज की विद्रुपताएँ और जिजीविषा, पारिवारिक समस्याएँ, दु:ख यातना आदि का चित्रण दिखाई देता है। उनकी कहानियों में दिशाहीन युवक का चित्रण हुआ है जो कि हर युवक शिक्षित है और नौकरी या रोजगारी न मिलने के कारण दिशाहीन है फिर भी हर युवक प्रयत्नशील रहे हैं। हर कहानी का कथानायक सिगरेट पीता हुआ दिखाई देता है। एकाद युवक दिशाहीन होकर गलत काम भी कर रहा है। यह सब परिस्थितीवश करते हैं। पीढ़ियों के संघर्ष की ओर भी ज्ञानरंजन ने अपनी दृष्टि ड़ाली है। जो हर युग में होता है और होता रहेगा क्योंकि जनरेशन ग्याप के कारण यह होता ही है। लेकिन ज्ञानरंजन की कहानियों के नए विचारधारा के युवक पुराने विचारधारा के पात्रों को छोड़ते नहीं साथ लेकर (भले ही संघर्ष करते) चलते हैं यह उनकी विशेषता दिखाई देती है।

आज के वर्तमान युग में पारिवारिक मूल्य में परिवर्तन आया है। इसका चित्रण 'कलह', 'सीमाएँ', 'खलनायिका और बारूद के फूल', 'पिता', 'दिलचस्पी' कहानियों में किया हुआ दिखाई देता है। मूल्यों में पारिवारिक मूल्य महत्त्वपूर्ण हैं जिसकी ओर आज की पीढ़ी ध्यान नहीं देती। प्रेम में विकृतियाँ आ गई हैं, इसका भी चित्रण ज्ञानरंजन ने 'दिवास्वप्नी', 'दिलचस्पी', 'हास्यरस', 'सीमाएँ', 'खलनायिका और बारूद के फूल' आदि कहानियों में दिखाई देता है। प्रेम में शरीर का आकर्षण महत्त्वपूर्ण हो गया है। मन के बदले तन को प्रेम में महत्त्व प्राप्त हो रहा है। प्रेम में ऊब आ रही है। प्रेम की विशाल व्याख्या करनेवाले भी सच्चा प्रेम नहीं कर सकते। प्रेम में त्याग, यातना सहने की प्रवृत्ति लुप्त चुकी है। आज के दिशाहीन युवक समय पर नौकरी न मिलने के कारण ब्याह नहीं करते और किसी विवाहित स्त्री के पीछे पड़ते हैं , जैसे 'छलांग' का कथानायक, 'दिवास्वप्नी' का इंदो आदि कहानियों के कथानायक बेकार हैं और कुंठित हैं इस कारण स्त्रियों के पीछे काम की पूर्ति करने के लिए

भागते हुए दिखाई देते हैं और स्त्रियों भी अपनी अतृप्त काम वासना पूर्ति के लिए या अकेलापन दूर करने के लिए उनके पास आती है। यह सब अनमेल विवाह या उनके पति की व्यस्तता के कारण हो रहा है।

ज्ञानरंजन ने महानगरीय जीवन का चित्रण 'अनुभव' और 'बहिर्गमन' कहानियों में किया है। आवास की समस्या, रोजगारी की समस्या, गुंड़ागर्दी आदि का चित्रण किया हुआ दिखाई देता है। वर्तमान युग में हो रहे परिवर्तनों में लोगों का अकेलापन, संत्रास, घुटन, अजनबीपन, व्यक्तिवाद आदि हैं। इसका चित्रण 'दिवास्वप्नी', 'कलह', 'मनहुस बंगला', 'शेष होते हुए', 'संबंध', 'पिता', आदि कहानियों में दिखाई देता है। ज्ञानरंजन ने हमेशा मध्यवर्गीय जीवन पर अधिक लिखा है। मध्यवर्गीय जीवन की विड़ंबना, संत्रास, जिजीविषा आदि का चित्रण दिखाई देता है। मध्यवर्ग हमेशा प्रयत्नशील रहा है। जैसे कि 'दिवास्वप्नी' का इंदो, 'कलह' की स्वाति, 'आत्महत्या' का कथानायक 'मैं', 'मृत्यु' का समाबहादुर, 'क्षणजीवी' का कथानायक 'मैं', 'बहिर्गमन' का मनोहर आदि सभी पात्र हमेशा प्रयत्नशील रहे हैं भले ही काम में असफल हुए हो। उनके अंदर की विकृतियों पर व्यंग्यात्मक दृष्टि से प्रकाश डालने का प्रयास किया है।

चंद लोगों के स्वार्थ हेतु देश की दुर्दशा हो रही है। उन लोगों को भी ज्ञानरंजन ने छोड़ा नहीं है। राजनीति पर एक ही कहानी है जो बड़ी सशक्त है। 'घंटा' कहानी में नेता की चाटूकारी करनेवालों की दुर्दशा का अत्यंत मार्मिक चित्रण कथानायक 'मैं' द्वारा किया है। नेता लोगों की कुटिलता पर भी प्रकाश ड़ाला है। कहानी लंबी है लेकिन पढ़ते वक्त पाठक का मन थकता नहीं। आर्थिक संघर्ष का चित्रण भी बहुत सी कहानियों में दिखाई देता है। 'संबंध', 'पिता', 'मृत्यु', 'क्षणजीवी', 'संबंध', 'दांपत्य', 'अनुभव', 'मनहुस बंगला', 'बहिर्गमन', 'रचना प्रक्रिया' आदि कहानियों में आर्थिक संघर्ष का चित्रण दिखाई देता है। अर्थ के कारण पिता-पुत्र के संबंध टूटे हैं तो कहीं भाई-भाई में संघर्ष निर्माण हो गया है। कभी पैसा न मिलने के कारण अन्न, वस्त्र मिला नहीं इस कारण 'मृत्यु' कहानी के सामबहादुर की मृत्यु हो जाती है। 'दांपत्य' में पत्नी के लिए रसगुल्ले लाने पैसे नहीं हैं। संयुक्त परिवार में पैसों की कमी के कारण परिवार विघटित होता गया दिखाई देता है। पैसों के लिए 'बहिर्गमन' का मनोहर सोमदत्त के साथ परदेस जाता है। पैसों के आधार पर समाज चलता रहता है। लेकिन कभी-कभी व्यक्ति से अधिक अर्थ को महत्त्व दिया गया है। हर पात्र अर्थ को पाने के लिए प्रयत्नशील है। 'मृत्यु' कहानी में पराधीनता का चित्रण मार्मिक हुआ है जो अँग्रेजों की नीचता और कठोरता की ओर ध्यान

आकृष्ट करता है। साथ ही सामाजिक रूढ़ि और परंपराओं के कारण समाज के विकास में बाँधा आती है इसका चित्रण उनकी कहानियों में दिखाई देता है। 'पिता', 'अमरूद का पेड़', 'शेष होते हुए' आदि कहानियाँ इस विवेचन का समर्थन करती हैं। भारतीय समाज में विवाह को पवित्र बंधन माना जाता है, उसी के आधार पर हर व्यक्ति को महत्त्व मिलता है। उसकी अनेक पद्धतियाँ हमारे यहाँ चलती हैं उसमें से रजिस्ट्रर विवाह और आर्यसमाज विवाह इन दो सुलभ पद्धतियों का चित्रण 'फेंस के इधर और उधर' और 'हास्यरस' कहानियों में दिखाई देते हैं। दोनों पद्धतियों में समय और पैसों की बचत होती है।

इस प्रकार ज्ञानरंजन की कहानियों में समाज के विविध पहलूओं का चित्रण दिखाई देता है।

# संदर्भ सूची


1. सीताराम झा 'श्याम', भारतीय समाज का स्वरूप, भूमिका
2. वही, भूमिका
3. आर. जी. सिंह, भारतीय समाज, पृ. 7
4. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानी अंतरंग पहचान, पृ. 73
5. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी सातवाँ दशक, पृ. 14
6. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 37
7. वही, पृ. 53
8. वही, पृ. 48
9. वही, पृ. 75
10. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 43
11. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 78-79
12. वही, पृ. 100
13. विजय मोहन सिंह, आज की कहानी, पृ. 154
14. यदुनाथ सिंह, समकालीन हिंदी कहानी प्रकृति और परिदृश्य, पृ. 19
15. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 147
16. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 72
17. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 70
18. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिंदी कहानी का परिपार्श्व, पृ. 152
19. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 34
20. पुष्पपाल सिंह, समकालीन कहानी युगबोध संदर्भ, पृ. 133
21. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी का सातवाँ दशक, पृ. 26
22. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिंदी कहानी का परिपार्श्व, पृ. 111

23. सं. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 102

24. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 67

25. वीरेंद्र सक्सेना, काम संबंधों का यथार्थ और समकालीन हिंदी कहानी, पृ. 130

26. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी सातवाँ दशक, पृ. 27

27. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 82

28. ज्ञानरंजन, सपना नहीं, पृ. 144

29. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 16

30. वही, सपना नहीं, पृ. 24

31. वही, पृ. 134

32. वही, पृ. 43

33. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 87

34. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 122

35. वही, पृ. 123

36. वही, पृ. 127

37. वही, सपना नहीं, पृ. 141

38. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 36

39. वही, पृ. 68

40. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी सातवाँ दशक, पृ. 20

41. ज्ञानरंजन, क्षणजीवी, पृ. 73

42. वही, पृ. 85

43. वही, पृ. 85

44. वही, सपना नहीं, पृ. 218

45. वही, पृ. 132

46. वही, पृ. 132

47. ज्ञानरंजन, सपना नहीं, पृ. 132

48. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानी अंतरंग पहचान, पृ. 77

49. सुरेश सिन्हा, हिंदी कहानी उदभव और विकास, पृ. 64

50. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 85

51. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानी अंतरंग पहचान, पृ. 77

52. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी का सातवाँ दशक, पृ. 38-39

53. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 72

54. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी का सातवाँ दशक, पृ. 39

55. वही, पृ. 33

56. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 34

57. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी सातवाँ दशक, पृ. 21

58. वही. पृ. 23

59. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, 130-131

60. वही. पृ. 71

61. वही, पृ. 79

62. वही, पृ. 32

63. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 75

64. वही, सपना नहीं, पृ. 200

65. वही, क्षणजीवी, पृ. 74

66. देश निर्मोही, पल-प्रतिपल, पृ. 126-127

67. प्रल्हाद अग्रवाल, हिंदी कहानी सातवाँ दशक, पृ. 21

68. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 15

69. वही, क्षणजीवी, पृ. 61

70. वेदप्रकाश अमिताभ, हिंदी कहानी के सौ वर्ष, पृ. 47

71. रामदरश मिश्र, हिंदी कहानी अंतरंग पहचान, पृ. 91

72. सं. त्रि. ना. रंजन, सप्तसिंधु, पृ. 15

73. वही, पृ. 15

74. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 114

75. ज्ञानरंजन, फेंस के इधर और उधर, पृ. 47

76. वही, पृ. 76

77. वही, क्षणजीवी, पृ. 13

78. वही, पृ. 18

79. वही, पृ. 22

80. वही, पृ. 23

81. सं. सत्यप्रकाश मिश्र, कहानीकार ज्ञानरंजन, पृ. 72

82. ज्ञानरंजन, सपना नहीं, पृ. 210

83. वही, फेंस के इधर और उधर, पृ. 136

84. वही, क्षणजीवी, पृ. 16

85. वही, सपना नहीं, पृ. 135

86. वही, पृ. 220

87. वही, क्षणजीवी, पृ. 12

88. वही, पृ. 15

89. वही, पृ. 15

90. वही, फेंस के इधर और उधर, पृ. 69

91. वही, पृ. 70

92. वही, पृ. 89